६ रुपए

दंत सुरक्षा अंक

द्वैमासिक

जीवनीय

स्वास्थ्य पत्रिका

शरद '९१
वर्ष २, अंक २

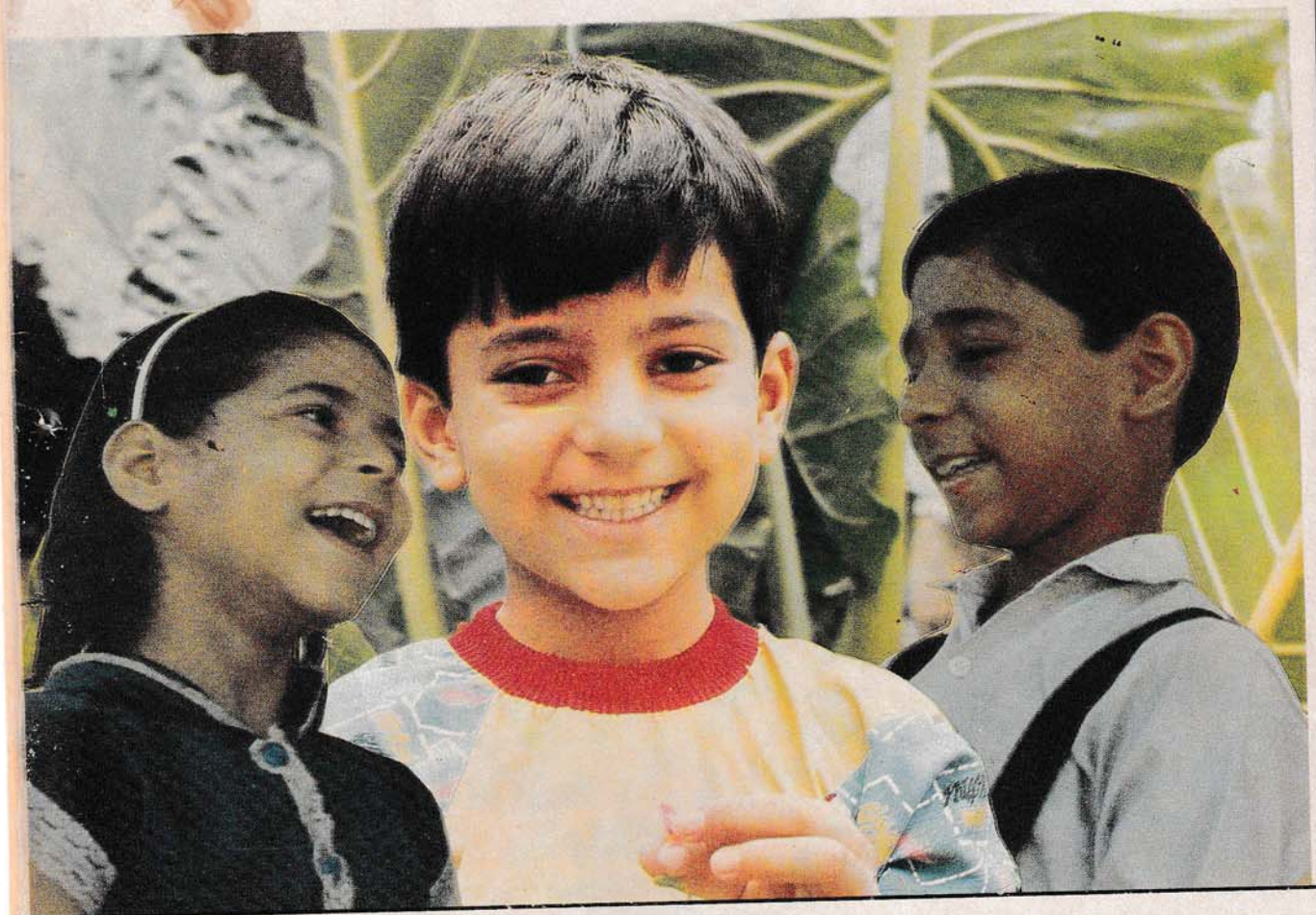

दाँतों का स्वास्थ्य और आयुर्वेद

दाँतों की देखभाल में नीम

बच्चों में दाँत निकलना

दातून वृक्ष पीलू

स्वास्थ्य का रहस्य - अपक्वाहार

ऋतुचर्या अपनाइए - सुखी मातृत्व पाइए

ऐलर्जी या प्रत्यूर्जता

पाँडु रोग

जीवनीय द्वैमासिक

मानद संपादक मंडल (लखनऊ)
वैद्य लक्ष्मीकांत कुलकर्णी
वैद्य सुल्तान अली खां
पं. काशीनाथ गोपाल गोरे
वैद्य पूर्ण चंद जैन
वैद्य बदलूराम रसिक
डा. मोहन बांडे
डा. पारस नाथ मिश्र
वैद्य राजकिशोर मिश्र
डा. रवि कुमार शर्मा
डा. हरि प्रकाश शर्मा
वैद्य वाचस्पति त्रिवेदी
डा. वेद प्रकाश

कार्यकारी संपादक
डा. नरेंद्र नाथ मेहरोत्रा

संयोजक
पं. माधवाचार्य

संपादकीय सहायक
वैद्य उमेश चंद्र शर्मा
कु. वीना टंडन

मुख पृष्ठ साज-सज्जा
श्री अली कौसर

वितरण - विज्ञापन सलाहकार
श्री वामिक एफ. रहमान

इस पत्रिका के लिये कापार्ट से मिले अनुदान के हम आभारी हैं

संपादकीय कार्यालय
लो. स्वा. प. सं. स.
ई - III/२५०, सेक्टर एच
अलीगंज, लखनऊ - २२६०२०
फोन - ०५२२-७७५६८

वर्ष २, अंक २
१६ सितंबर - १५ नवंबर

जीवनीय के चंदे की दरें

एक प्रति	६ रु.
वार्षिक	३० रु.
द्विवार्षिक	५५ रु.
त्रिवार्षिक	८० रु.
आजीवन	३५० रु.

इस पत्रिका के कम्पोज़र विनायक
सी- १५/१०, पेपर मिल कालोनी, निशातगंज लखनऊ।

लोक स्वास्थ्य परंपरा सवंर्धन समिति की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा द्वारा प्रकाश पैकेजर्स, २५७, गोलागंज लखनऊ - १८ से मुद्रित तथा ई -III/२५०, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ - २० से प्रकाशित, संपादक डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा

संपादकीय सलाहकार समिति
सिद्ध वैद्य ब्रहमानंद स्वामिगल, कोयंबटूर
हकीम अल्ताफ अहमद आज़मी, नई दिल्ली
डा. गीता बामेजई, नई दिल्ली
वैद्य विवेकानंद पांडे, नई दिल्ली
वैद्य भगवान दाश, नई दिल्ली
वैद्य बृहस्पति देव त्रिगुण, नई दिल्ली
वैद्य मायाराम उनियाल, नई दिल्ली
श्री गंगा राम जानू आवारी, नासिक
वैद्य शिव कुमार मिश्र, पीलीभीत
वैद्य सुभाष रानाडे, पुणे
डा. उमा, बंगलूर
डॉ. भारतेन्दु प्रकाश, बाँदा
हकीम सैयद खलीफतुल्लाह, मद्रास
वैद्य (श्रीमती) श. कोपिकर, मुंबई
वैद्य रमेश म. नानल, मुबई
वैद्य भास्कर वि. साठ्ये, मुंबई
वैद्य नरेन्द्र सो. भट्ट, मुंबई
हकीम सैफुद्दीन अहमद, मेरठ
वैद्य वी. बी. म्हैस्कर, वड़ोदरा
वैद्य रामहर्ष सिंह, वाराणसी

लोक स्वास्थ्य परंपरा संवर्धन समिति
रजिस्टर्ड कार्यालय
पो. बा. ७१०२ रामनाथ पुरम्
कोयंबतूर - ६४१०४५
फोन: (०४२२) २३१८८, २६९५३, ३०१३२
मध्य भारत कार्यालय
श्रीमती साधना काले
बी-२, पुष्पगंधा फ्लैटस्, आशा मंगल के सामने,
धरम पेठ, नागपुर - ४४० ०१०
फोन: (०७१२) ५३५७३०
पश्चिम क्षेत्रीय कार्यालय
द्वारा एकेडमी ऑफ डेवेलपमेन्ट साइन्सेस्,
ग्रा. व पो. कशैले, ता. करजत
रायगढ़, महाराष्ट्र
दक्षिण क्षेत्रीय कार्यालय
द्वारा पी. पी. एस. टी. फाउंडेशन
२९, IV मेन रोड, गांधी नगर, अड्यार
मद्रास - ६०० ०२० फोन: ४१८१६६

संपादकीय

जीवनीय का पिछला यकृत रोग विशेषांक कामला पर राष्ट्रीय संगोष्ठी के अवसर पर प्रकाशित हुआ था जिसकी एक संक्षिप्त रिपोर्ट इस अंक में छपी है। जब इस संगोष्ठी में सम्भवतः पहली बार इस देश में प्रचलित विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों के विज्ञों ने एक रोग विशेष की एकरूप समझ के साथ उसके उपचार की सम्भावित रणनीतियों पर विचार किया तो उससे कुछ बहुमूल्य मुद्दे उभर कर सामने आए, जिनका समाधान सम्भवतः देशी चिकित्सा पद्धतियों के प्रसार एवं विभिन्न कार्यक्रमों में उनकी उपयोगिता से जुड़ा है।

इस बात का विशेष ध्यान रखना होगा कि देशी चिकित्सा पद्धतियों और आधुनिक चिकित्सा पद्धति के मूल सिद्धांतों में जो मौलिक अन्तर हैं उनका ध्यान रखे बिना किसी एक पद्धति के सिद्धान्तों से निदान और दूसरी पद्धति की समझ से उस रोग के उपचार के प्रयासों में समस्याएँ होना स्वाभाविक है।

सम्भवतः इस कारण भी किसी रोग विशेष के उपचार में उसके निदान के महत्व को ध्यान में रखे बिना चिकित्सकीय शोध के प्रयोगों के सफल होने की सम्भावनाएँ काफी कम होंगी।

देशी चिकित्सा पद्धतियों में रोग–निदान–उपचार का जो अभिगम (अप्रोच) है वह महज रोग–विशेष के प्रस्तुत लक्षणों पर निर्भर नहीं होता अपितु त्रिदोष सिद्धांत का उसमें एक महत्वपूर्ण स्थान होता है। तदनुसार शाखाओं में संचित पित्त का कोष्ठ में लाकर विरेचन कराना या कफजन्य रुद्धता को दूर करना किस स्थिति में कराना है इसके मापदण्ड जब तक आधुनिक विज्ञान में नहीं होते तब तक उसके द्वारा यह समझना भी कठिन है कि किसी विशेष प्रकार के कामला के उपचार के लिए किसी एक औषधि से लाभ सदैव सम्भव नहीं होगा।

ऐसी स्थिति में केन्द्रित चिकित्सकीय परीक्षणों (क्लिनिकल ट्रायल्स) का बेमानी होना स्वाभाविक है। अतः देशी-चिकित्सा के अनुभवों एवं चिकित्सकीय परीक्षणों के बीच लाभकारी समंजस्य स्थापित करना कदाचित बहुत महत्व का कार्य है। परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि जब तक ऐसी परीक्षण की विधियों की खोज आधुनिक विज्ञान नहीं करता तब तक सिद्ध–उपचारों के लाभ से जनसाधारण को वंचित रखा जाए।

ऐसे ही कुछ प्रश्नों का सन्दर्भ जीवनीय के वर्तमान दन्त–सुरक्षा अंक से भी है। मुख शुद्धि एवं दाँतों को स्वस्थ रखने सम्बन्धी जितने विस्तृत उपायों का वर्णन एवं प्रयोग इस देश में शताब्दियों से किया जाता रहा है उससे भी आधुनिक विज्ञान ने काफी कुछ सीखा है और सम्भवतः और अधिक सीखने की सम्भावना है। ऐसी कुछ जानकारियों पर अपने शोध के परिणामों को हमारे एक साथी ने जीवनीय के पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है। उनके अनुभवों में आधुनिक शोधकर्ता खामियाँ तो निकाल सकते हैं पर उनकी प्रामाणिकता व महत्व को नहीं नकारा जा सकता।

जहाँ एक ओर लोक स्वास्थ्य परम्पराओं के सम्वर्धन में हम सतत् प्रयत्नशील रहेंगे वहीं हमें आशा है कि न केवल व्यक्तिगत स्तर पर वरन् सरकारी स्तर के कार्यक्रमों में भी इन असरकारी उपायों से लाभ उठाने का पूरा प्रयास किया जायगा।

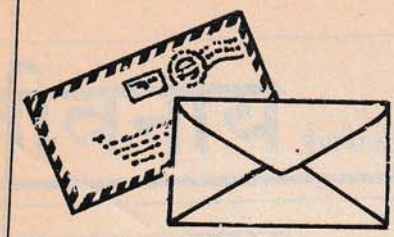

पाठकों के पत्र

सम्पादक जी,

आपकी पत्रिका "जीवनीय" पढ़ी और पसन्द आई। आपकी हिन्दी/अंग्रेज़ी सेहत पत्रिका हमें अपने यहाँ चैरिटी होम में मँगानी है। कृपया मुझे रियायती रेट-लिस्ट और सैम्पुल के रूप में पत्रिका की कुछ प्रतियाँ भेजें। इस तरह जनहित में सहयोग प्रदान करें।

डॉ. (श्रीमती) सिंह, चैरिटी होम, नई दिल्ली।

"जीवनीय" के अंक १५ सितम्बर १९९१ के द्वारा पता चला कि आप जीवनीय के उन ग्राहकों को जो दो वर्ष या अधिक से ग्राहक हैं तुलसी पर पोस्टर निःशुल्क दे रहे हैं। मैं भी इस पत्रिका का तीन वर्षों से ग्राहक चला आ रहा हूँ। कृपया उक्त पोस्टर भेजने का कष्ट करें। आपकी पत्रिका के लिए हम अपनी शुभकामनाएँ भेज रहे हैं।

धर्मवीर सिंह मलिक, सोनीपत, हरियाणा।

कृपया सम्बन्धित सूचना पर ध्यान दें, यह छूट केवल उन लोगों के लिए है जो आगे से पत्रिका के ग्राहक बनना चाहते हैं। वैसे भी यह छूट केवल कुछ समय के लिए ही है जो अब बढ़ा कर १४ नवम्बर तक कर दी गई है।

सम्पादक

आपकी पत्रिका देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पत्रिका अच्छी लगी। कृपया मुझे समाचार पत्रक (हिन्दी) और तुलसी वनौषधि पर सचित्र पोस्टर भेजने का कष्ट करें। इन दोनों को वी.पी.पी. द्वारा छुड़ाने का वादा करता हूँ।

विनीश शुक्ला, जालौन, उ.प्र.

"जीवनीय" हमारे सभी ग्राहकों को प्राप्त हो रही है। इसके लिए आपको बहुत-बहुत धन्यवाद। भविष्य में हमारा यह प्रयास रहेगा कि इस जनहित पत्रिका के अधिक से अधिक ग्राहक बनाकर आपको सहयोग दें।

वैद्य एम. एस. खान, कोहका, दुर्ग

मेरा एक अनुभव आमलकी रसायन के सम्बन्ध में है। आपसे विनम्र अनुरोध है कि मेरे इस अनुभव को जीवनीय पत्रिका में प्रकाशित करके मुझे अनुग्रहीत करें ताकि हमारे सभी पाठकगण इसका लाभ उठा सकें।

मैं आठ वर्ष की आयु से अम्लपित्त से ग्रसित था। मैंने अंग्रेज़ी दवाइयों का दस साल तक सेवन किया लेकिन मुझे कोई भी स्थायी लाभ नहीं हुआ। डाईजीन, एल्माकार्ड आदि मेरे लिए भोजन स्वरूप बन गयी थी। सिमैटिडीन, रैनिटिडीन व फैमिटिडीन आदि के कोर्स भी मैं कई बार ले चुका था। १९८६ में मेरा चयन ऋषिकुल राजकीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय में हुआ। वहाँ जाकर मैंने आमलकी रसायन का सेवन भोजनोपरांत २ गोली लेना प्रारम्भ किया। आमलकी रसायन की गोली न मिलने पर मैं अक्सर कच्चा आँवला भोजनोपरांत ले लेता था। इससे मुझे आश्चर्यजनक लाभ हुआ। आज मैं पूरी तरह स्वस्थ हूँ। मैं बी.ए.एम.एस. करके मेरठ में प्रैक्टिस करता हूँ और अम्लपित्त के काफी मरीजों को आमलकी रसायन की चिकित्सा द्वारा ठीक कर चुका हूँ। आपसे अनुरोध है कि मेरा यह अनुभव प्रिय पाठकों तक अवश्य पहुँचाएँ ताकि वे भी यदि एसिडिटी जैसी बीमारी से परेशान हों तो आमलकी रसायन का सेवन करके पूर्णरूप से स्वस्थ हो सकें।

डॉ. ओमदत्त भारद्वाज, मेरठ

मुझे "जीवनीय" का वर्षा अंक मिला और उसे पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। क्योंकि उससे मुझे बहुमूल्य जानकारी प्राप्त हुई। आपकी पत्रिका में विभिन्न वैद्यों के लेख छपने के कारण वास्तविक ज्ञान प्राप्त होता है। कृपया इन वैद्यों के नाम व पते भी देने का कष्ट किया करें जिससे उनसे पत्र-व्यवहार किया जा सके।

सुभाष धारीवाल, संगरूर, पंजाब

आपकी पत्रिका "जीवनीय" में छपे "कैंसर की आयुर्वेदिक दवा" लेख को पढ़ा और इस विषय में अधिक जानकारी प्राप्त करने की इच्छा है इसलिए इस सम्बन्ध में वैद्य जी का पता हमें सूचित करें जिसके लिए मैं आभारी रहूँगा। इस रोग के इलाज के लिए मैं वैद्य जी से जल्दी सम्पर्क स्थापित करना चाहता हूँ।

प्रेम शंकर मिश्र, इलाहाबाद

इस अंक में

शरद ऋतुचर्या ४
शरद ऋतु में पंचकर्म ६
शरद ऋतु एवं स्वास्थ्य ७
ऋतुचर्या एवं सुखी मातृत्व ८
प्रकुपित पित्त १०
पाण्डु रोग १३
एलर्जी या प्रत्यूर्जता १५
स्वास्थ्य का रहस्य - अपक्वाहर १७
गर्भ निरोध - परंपरागत उपाय १९
देशी दवाओं से भी सावधान ३४
सावधान! बच्चों के दूध में जहर ३५
तीसरी दुनिया की परंपरागत चिकित्सा ४०
भटकटैया के बीज और कैंसर ४४

आवरण लेख - दंत सुरक्षा

आयुर्वेद में दंत स्वास्थ्य २२
दंत रोग की रोकथाम २४
नीम - आधुनिक विज्ञान और दाँत २६
दातून वृक्ष - पीलू २९
बच्चों में दाँत निकलना ३०

औषध द्रव्य

मुलेठी के उपयोग १२
चर्म रोगों में बाकुची ३८
औषध-निर्माण- मरहम-पटटी तेल ५१

आहार द्रव्य

मसालों के औषधीय उपयोग ३६
विश्व भेषज - अदरख ३७
वजन घटाने में पत्तागोभी ४१

स्थायी स्तंभ

दादी माँ २०
आहार और हमारा स्वास्थ्य ३२
पत्र-पत्रिकाओं से ४२
मधुसंचय ४३
ज्ञानकोष - भूताग्नि ४६
पुस्तक समीक्षा ४९
शब्द कोष ५०

शरद ऋतुचर्या

वैद्य प्रमोद मालवीय एवं वैद्य पूर्णचन्द्र जैन, लखनऊ

यह ऋतु विसर्ग अथवा सौम्य काल के मध्य की ऋतु है अतः आकाश स्वच्छ एवं निर्मल रहता है। सूर्य की गर्मी दोपहर में तो काफी अधिक रहती है परन्तु प्रातः एवं सन्ध्या समय में वायु में रहने से गर्मी कम होने लगती है। इस ऋतु में नदी, तालाब, कुएँ आदि का जल स्वच्छ एवं निर्मल हो जाता है उसमें गन्दगी नहीं रहती, शीतलता अधिक रहती है। इस जल को हंसोदक की संज्ञा दी है। वर्षा ऋतु में जल में चिपचिपापन, गुरुता तथा अम्लपाकिता रहती है। शरद में दिन में जल सूर्य किरणों से तप्त होकर निर्विष हो जाता है तथा रात्रि में चन्द्रमा की शीतल किरणों से दोष रहित निर्मल अमृततुल्य हो जाता है। कहते है कि इस ऋतु में अगस्त्य नक्षत्र के प्रभाव से जल में विशिष्ट गुण आ जाते हैं और आचार्यों ने इसके उपयोग को उत्तम कहा है। इस ऋतु में वातावरण के प्रभाव से वनस्पति जगत में लवण रस अधिक होता है और प्राणियों में मध्यम स्निग्धता एवं मध्यम बल पाया जाता है।

शरद ऋतु का शरीर पर प्रभाव

शरद ऋतु प्राकृतिक सौन्दर्य की दृष्टि से मनोहारी है। रामायण में रामचन्द्रजी लक्ष्मण से वनवास काल में वर्षा के उपरांत चारों ओर फैली हरियाली एवं पंपा सरोवर की छटा तथा पक्षियों के कलरव से प्रफुल्लित होकर प्रकृति के सौन्दर्य का विवरण देते हैं। वर्षा ऋतु में कमजोर अग्नि वाले पुरुष में दूषित जल से अन्नपान विदाह को प्राप्त होकर पित्त का संचय करता है। वही पित्त शरद में सूर्य की किरणों से पिघल कर शरीर में बढ़ जाता है। सूर्य की उष्णता एवं तीक्ष्णता से इस ऋतु में वात का स्वतः शमन भी होने लगता है।

शरद पूर्णिमा पर चाँदनी रात में घूमना ही ठीक है, पर ओस में सोना नहीं

यमदंष्ट्रा काल

शरद ऋतु की समाप्ति एवं हेमन्त के प्रारम्भ का समय ऋतुसंधिकाल कहलाते हैं। इस काल को आचार्यों ने यमदंष्ट्रा काल कहा है और आहार में अल्पाहार लेने के साथ इस काल में विशेष सावधानी बरतने को कहा है।

शरद काल की व्याधियाँ

शरद ऋतु में पित्त से सम्बन्धित रोगों की प्रमुखता होती है। वर्षा के जल से जगह-जगह गड्ढ़ों में जल इकट्ठा होता है। इस दूषित जल में मच्छरों के बैठने से मलेरिया आदि बुखार भी फैलते हैं। वर्षा ऋतु में मन्दाग्नि कमजोर पाचन शक्ति के कारण अन्न का पचन ठीक नहीं होता है। शरद ऋतु में भी खट्टे, चरपरे, बासी एवं गरिष्ठ भोजन से वर्षा ऋतु का संचित पित्त और भी प्रकुपित हो जाता है। अतः इस काल में पित्त ज्वर, पित्त श्लैष्मिक ज्वर, मलेरिया, मस्तिष्क ज्वर, कामला ज्वर आदि विभिन्न ज्वर उत्पन्न होते हैं। पित्त की विकृति के साथ रक्त भी विकृत होने से रक्तपित्त, आँख उठना, खट्टी डकार, अम्लपित्त, खुजली, शीतपित्त, उदर्द, विभिन्न चर्म विकार फोड़ा-फुंसी, उदर शूल, आमाशय व्रण, आध्मान, आनाह, सिरदर्द, भ्रम, हृदय की धड़कन, उच्च रक्तचाप, कामला, पाण्डु, खाँसी, दमा आदि रोगों का आक्रमण भी होता है।

शरद ऋतु में सावधानियाँ

शरद ऋतु पित्त प्रकोप का समय है तथा अधिकांश रोग पित्त से सम्बन्धित लक्षण उत्पन्न करते हैं। अम्ल, लवण एवं कटुरस

पित्त की वृद्धि करते हैं अतः खट्टी, बासी, चरपरी, अधिक नमकीन खाद्य द्रव्यों को कम खाना चाहिये। शरद ऋतु पित्त संशोधन का उत्तम काल है। संशोधन को विरेचन एवं रक्त मोक्षण क्रिया द्वारा पित्त निकालने का उत्तम उपाय है। विरेचन के लिए अमलतास की फली, निसोथ का चूर्ण, त्रिवृत का चूर्ण अथवा हरड़ का चूर्ण उत्तम कहा गया है। विरेचन से भी पित्तशमन न होने पर तथा उच्च रक्तचाप में सावधानी से कुशल चिकित्सक द्वारा रक्तमोक्षण कराना चाहिये। पित्त के शमन में मधुर, तिक्त एवं कषाय रसों का विशेष कार्य है। अतः पित्त रोगों में मधुर, तिक्त, कषाय रस युक्त आहार का प्रयोग करना चाहिये। दूध में चीनी या मिश्री मिलाकर सेवन करने से पित्त का शमन होता है। इसी प्रकार कुटकी, कासनी आदि तिक्त द्रव्यों से साधित घृत का प्रयोग पित्त शमन के लिए सर्वोत्तम है। कषाय रस में आँवले का प्रयोग, चूर्ण, मुरब्बा, चटनी के रूप में पित्त शमन के लिए किया जा सकता है। शरद ऋतु ज्वर प्रकोप का विशिष्ट काल है। इसे रोकने के लिये विरेचन पूर्वक तुलसीपत्र को अथवा तुलसीपत्र, मुनक्का एवं दूध के साथ प्रतिदिन सेवन करें। गुरुच २ से ४ ग्राम की मात्रा में प्रतिदिन चूर्ण या क्वाथ के रूप में सेवन करना भी ज्वर प्रतिषेध के लिए उत्तम है। दूर्वा रस एवं शंखपुष्पी स्वरस रक्तपित्त एवं उच्च रक्तचाप के प्रतिषेध के लिए उत्तम है। शरद ऋतु में वात व्याधि यदि कोई हो तो स्वतः शांत हो जाती है परन्तु यदि वातवर्द्धक द्रव्यों का सेवन जारी रखा तो वात व्याधि पुरानी एवं चिरकारी हो जाती है।

शरद ऋतु में सेवनीय आहार-विहार

शरद ऋतु में पित्त एवं वात शामक आहार-विहार का सेवन किया जाता है। आचार्य चरक के अनुसार शरद ऋतु में मधुर, लघु, शीतल, तिक्त रस युक्त एवं पित्त शामक अन्नपान का उचित मात्रा में सेवन करें। भोजन अच्छी भूख लगने पर तथा रात्रि के भोजन का पचन होने एवं पाखाना साफ होने पर लेना चाहिये। चरक ने तिक्त द्रव्यों से साधित घृत का पीना, तिक्त द्रव्यों द्वारा विरेचन एवं रक्तमोक्षण को शरद में पित्त शांति के लिये उत्तम कहा है।

गाय का दूध, घी, मक्खन, मलाई तथा अल्पमात्रा में मिठाई का सेवन किया जा सकता है। प्रातःकाल के नाश्ते में डबल रोटी, मक्खन, कॉर्न फ्लेक, रामदाना, चावल की खील दूध के साथ ली जा सकती है। चाय अधिक बार न लेवें। मूँग की धुली दाल का हलुआ एवं पकोड़ी भी ली जा सकती है। दोपहर के भोजन में चपाती, चावल, मूँग या अरहर की दाल अथवा मसूर की दाल तरकारी के साथ लेवें। दहीं के स्थान पर ताजे तक्र (जो खट्टा न हो) में धनिया, जीरा, हींग, राई आदि का छौंक देकर लिया जा सकता है। सब्ज़ियों में परवल, आलू, गोभी, बन्दगोभी, तरोई, लौकी, पालक का इस्तेमाल करें। फलों में सेब, अनार, नारियल, कमलगट्टा, केला, कसेरू, आँवला, सिंघाड़ा, नींबू आदि सेवनीय हैं। मीठे में फेनी, बालूशाही, इमरती, जलेबी, खीर, खोए की मिठाई उत्तम हैं।

शरद पूर्णिमा के दिन चाँदनी में रात्रि की शीतलता एवं मनोहारिता का लोग लुत्फ उठाते हैं। शरद ऋतु में निर्मल एवं स्वच्छ वस्त्र हल्के रंग के अथवा सफेद धारण करने चाहियें। तिल या सरसों के तेल हलके अभ्यंग (मालिश) के बाद ताजे पानी से नहाना चाहिये। हलका व्यायाम भी इस ऋतु में किया जा सकता है। शरद ऋतु में सुगन्धित उबटन एवं इत्र आदि भी प्रशस्त माने गये हैं।

शरद ऋतु में वर्जनीय आहार-विहार

शरद ऋतु में खट्टे, चरपरे, अत्यधिक नमकीन पदार्थों का आहार में प्रयोग न करें। आहार मात्रा से अधिक भी न खायें। तेल, शराब, दही, कांजी, विभिन्न क्षार, कुधान्य, उड़द, तिल, सरसों एवं अत्यन्त रूक्ष पदार्थों का सेवन भी अधिक न करें। धूप का एवं ओस का सेवन नहीं करना चाहिये। इसी प्रकार दिन में सोना भी शरद ऋतु में हानिकारक होता है। मछली आदि जलचर प्राणियों का मांस, पशु-पक्षियों का मांस इस ऋतु में न लेवें अथवा अल्पमात्रा में केवल दोपहर में ही लेवें।

आपके अनुभव

जैसा हम समय - समय पर अपने पाठकों से अनुरोध करते रहे हैं, हम प्राथमिक स्वास्थ्य संबंधी आपके अनुभवों का विशेष स्वागत करते हैं। यदि आपने जीवनीय में उल्लिखित या अन्यथा प्राप्त जानकारी के आधार पर कुछ लाभकारी या हानिकारक अनुभव किये हैं तो हमें आपसे अपेक्षा है कि आप अपने अनुभवों को हमें अवश्य लिखें ताकि उनसे अन्य पाठक भी लाभ उठा सकें।

- संपादक मंडल

शरद ऋतु में पंचकर्म

वैद्य हरिदास श्रीधर कस्तूरे, अहमदाबाद

शरद ऋतु में प्रकृति के नियमों के अनुसार मनुष्यों का बल बढ़ता रहता है। फिर भी इस ऋतु में आरोग्यवर्धन का अच्छा प्रयत्न करना चाहिए। इस काल में पित्त दोष का प्राकृतिक प्रकोप भी होता है। अतः पित्त की सामान्य विकृतियों से बचने का उपाय भी करना चाहिए। इसी तरह वर्षा में प्रकुपित वात का अब शमन काल है, अतः वात फिर प्रदुष्ट न हो ऐसा भी प्रयास होना चाहिए।

कहा गया है कि *"वैद्यानां शारदी माता, पिता च कुसुमाकरः"* अर्थात् वैद्यों के लिये शरद ऋतु माँ है और वसन्त ऋतु पिता है। माँ जिस तरह से बच्चों का संवर्धन करती है उसी प्रकार यह ऋतु वैद्यों का संवर्धन करती है। मतलब रोग काफी बढ़ते हैं और वैद्यों की कमाई अच्छी-खासी होती है।

यह ऋतु वात का शमन काल (गिरावट का समय) और पित्त का प्रकोप काल (उत्कर्ष का समय) होने से खान-पान की किसी भूल से दोनों का प्रक्षोभ हो सकता है और रोग हो सकते हैं।

पित्त दोष के लिए उत्कृष्ट चिकित्सा विरेचन है और मध्यम चिकित्सा बस्ति है। इसी तरह पित्त विकारों में रक्तमोक्षण भी अत्यन्त उपयोगी होता है।

शरद ऋतु में यदि नित्य रात को हरीतकी चूर्ण या त्रिफला चूर्ण लिया जाए तो पित्त के लिए उत्तम प्रतिरोधक चिकित्सा होगी। रात को सोते समय ३ से ६ ग्राम त्रिफला या केवल हरीतकी चूर्ण गरम पानी के साथ लें। यह प्रातःकाल पेट साफ करता है और पित्त का निष्कासन करता है।

त्रिफला और हरीतकी दोनों रसायन गुण के द्रव्य हैं। ये मात्र विरेचन नहीं हैं। अतः अन्य आधुनिक दस्तावर (रेचक) औषधियों के समान दोषयुक्त नहीं हैं अपितु ये शरीर में रसरक्तादि धातुओं का बृंहण करनेवाले और आयुष्य पदार्थ माने गये हैं।

इनके अतिरिक्त अविपत्तिकर चूर्ण एक उत्तम विरेचक औषध है। इसमें मुख्य औषध स्वर्णपत्री (सनाय पत्ती) है, जो विरेचन के साथ ही पित्तशामक भी है। विरेचन की एक और निरापद औषधि स्रंसन चूर्ण है जिसमें निशोथ का समावेश होता है। यह भी पित्तशामक एवं विरेचन में श्रेष्ठ है। इनमें से कोई एक योग ३ से ६ ग्राम कोष्ठ की मृदुता या कठोरता के अनुसार गरम पानी के साथ लेना चाहिये।

पित्त के लिये बस्ति मध्यम चिकित्सा है। बस्तियाँ अनेक द्रव्यों के संयोग से अनेक प्रकार का अद्‌भुत कार्य करती है। पित्त दोष के लिये क्षीरबस्ति का प्रयोग बहुत ही लाभप्रद होता है। इसके लिए योग्य वैद्य से सम्पर्क करें। यह बस्ति, अम्लपित्त, परिणामशूल तथा पित्तज ग्रहणी में भी अत्यन्त लाभप्रद होती है। स्वस्थ व्यक्ति यदि ले तो उसके शरीर का बल बढ़ता है, रंग निखरता है और कृशता कम होती है।

रक्तमोक्षण का अर्थ है शरीर में से रक्त का निष्कासन। पित्त और रक्त में आश्रयाश्रयी भाव (आवास एवं निवासी का सम्बन्ध) है। अतः रक्त निर्हरण से पित्त की शांति होती है। निपुण वैद्य के द्वारा शरद ऋतु में अथवा उससे पूर्व ही १०० से १२५ सी.सी. (मि.ली.) रक्त निकालने से पित्त रोग तथा रक्तदोष से उत्पन्न रोगों का प्रतिकार होता है।

जीवनीय - पुराने अंक बिना डाक शुल्क पर

पाठकों के लगातार अनुरोध के कारण हमने जीवनीय के पुराने अंक उपलब्ध कराने हेतु पत्रिका पर डाक शुल्क की छूट देने का निर्णय लिया है। इस प्रकार पत्रिका के पुराने अंकों में दी गई जानकारी का लाभ पाठक उठा सकेंगे। जीवनीय का प्रत्येक अंक परिवार में रखने योग्य है अतः पाठक इस छूट का तुरन्त लाभ उठाएं। पिछले एक वर्ष के छः अंकों की कीमत मात्र ३० रु ही पड़ेगी। रजिस्टर्ड डाक से मंगाने के लिए ६ रु अधिक भेजे। बाहर के चेकों पर १० रु. बैंक शुल्क भी देना होगा। चेक या ड्राफ्ट **एल.एस. पी.एस. एस., जीवनीय** *के नाम से ही भेजें।*

वितरण प्रबन्धक

शरद ऋतु एवं स्वास्थ्य

वैद्य मनमीत सिंह, लखनऊ एवं वैद्य अमरजीत सिंह, अतर्रा

वर्षा ऋतु के बाद शरद का आगमन होता है, इसका समय लगभग १६ सितम्बर से १५ नवम्बर (आश्विन एवं कार्तिक मास) के मध्य माना जाता है। इस काल में वात का प्रशमन और पित्त का प्रकोप होता है। पित्त, रक्त को दूषित कर फोड़े, चर्मरोग, गण्डमाला इत्यादि रोग उत्पन्न करता है। इस ऋतु में अपचन, खट्टे डकार, पेट में जलन, अम्ल-पित्त, अम्ल-वमन, आमाशय-व्रण, उदर शूल, विषाद, अनिद्रा, हृदय की धड़कन का बढ़ना, सिरदर्द, चक्कर आना एवं नपुंसकता होने की प्रबल सम्भावना होती है। शरद ऋतु में दमा, आमवात, सन्धिवात, लकवा, अर्दित, विसूचिका, अग्निमांद्य इत्यादि रोगों में स्वतः लाभ मिलने लगता है। परन्तु प्राग्वात (पूर्वी हवा) से बचना चाहिए क्योंकि यह जोड़ों के दर्द को बढ़ाती है।

वर्षा ऋतु में संचित पित्त शरद ऋतु में एकाएक सूर्य की तीक्ष्ण किरणों के संताप से पिघलकर कुपित हो जाता है। इसकी शान्ति के लिए पंचतिक्त घृत का सेवन करना चाहिए। इस ऋतु में रक्त की ऊष्मा बढ़ जाती है, अगर सामान्य विरेचन से लाभ न मिले तो रक्त मोक्षण करना श्रेष्ठ होता है। हरड़ का प्रयोग, मिश्री, गुड़ या धनिया के साथ करना चाहिए। आँवले को शक्कर के साथ लेना भी लाभकारी होता है। मनुष्य को भोजन, भूख लगने पर करना चाहिए। शरद **पूर्णिमा की रात में खुले आकाश के नीचे खीर बनाकर खाने से दमा रोग से पीड़ित रोगी को काफी लाभ मिलता है। इस ऋतु में चाँदनी को अमृततुल्य माना गया है।** महर्षि चरक ने दिन में सूर्य की किरणों से गरम, रात्रि में चन्द्रमा की किरणों से शीतल, काल-स्वभाव से पके हुए, अगस्त्य तारे के उदय होने के प्रभाव से विष रहित हुआ जल "हंसोदक" को अमृत तुल्य बताया है। इसका सेवन स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभकारी है।

अनुकूल आहर-विहार

इस ऋतु में मीठा, कसैला व तिक्त आहार लेना चाहिये। ज्वार से बने पदार्थ, दूध, दही, मक्खन, घी, मलाई, पनीर, श्रीखण्ड का सेवन, सब्जियों में चौलाई, बथुआ, तरोई, फूलगोभी, परवल, मूली, पालक, सोआ, फलों में सेब, अनार, केला, सिंघाड़ा, दालों में मूँग की दाल, मांस में तीतर, हिरण, खरगोश, सूअर, मछली का मांस हितकर होता है। मुनक्का या हरड़ या अरण्ड का सेवन करना विरेचन के लिए लाभकारी होता है। नाश्ते में दलिया, बिस्कुट, डबल रोटी मक्खन के साथ, पोहा, जलेबी, इमरती का सेवन हितकर होता है। इस ऋतु में प्रातःभ्रमण सेहत के लिए हितकर है। खासकर हृदय के रोगियों को खुले स्थान में जाकर लम्बी-लम्बी साँस लेने से इस रोग से आराम मिलता है। इस ऋतु में हल्का व्यायाम करना चाहिये। व्यायाम से पूर्व मालिश करना एवं उपरांत गुनगुने जल में स्नान करना लाभदायक है। इस ऋतु में सूती वस्त्र एवं फूलों की मालायें पहननी चाहियें तथा कपूर एवं खस का लेप करना हितकर होता है। रात्रि में सोने से पूर्व खुले आकाश के नीचे कुछ देर चलना हितकर होता है।

प्रतिकूल आहार-विहार

इस ऋतु में पित्त के प्रकोप से बचने के लिये अम्ल, लवण, कटु, गर्म, चरपरा भोजन नहीं करना चाहिए। दिवास्वप्न, रात्रि जागरण, ज्यादा व्यायाम स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। इस ऋतु में स्त्री-सहवास कम करना चाहिये। धूप एवं ओस में ज्यादा नहीं बैठना चाहिये। इमली, क्षार, सुरापान, तेल, दही, खट्टा-मट्ठा आदि का सेवन नहीं करना चाहिए। ऐसे व्यक्ति जो दिन भर कुछ न कुछ खाते रहते हैं, वे रोग को निमन्त्रण देते हैं। मछली का मांस नहीं खाना चाहिए। बैंगन, लहसुन, हींग, सौंफ, काली मिर्च, पीपल, करेला, गर्म मसाला आदि का सेवन, उड़द की पीठी से बने बड़े एवं कढ़ी स्वास्थ्य के लिये हानिकर होती है।

ऋतु चर्या अपनाइये सुखी मातृत्व पाइये

डॉ. मंजरी द्विवेदी, वाराणसी

एक विदेशी कहावत है जिसका अर्थ है- ईश्वर ने माँ को इसलिये बनाया है क्योंकि वह एक ही समय में हर जगह नहीं रह सकता है। इस कहावत से हम माँ की महत्ता को समझ सकते हैं। गृहस्थ जीवन अपनाने के बाद मातृत्व हर स्त्री का स्वप्न होता है। स्त्री की सम्पूर्णता उसके मातृत्व में ही है। स्त्रियों को सुरक्षित मातृत्व प्रदान करने के लिए सरकार द्वारा अनेकों प्रयास किये जा रहे हैं परन्तु फिर भी गर्भाधान की असफलता एवं गर्भावस्था उपद्रव एक समस्या बनी ही है।

स्वास्थ्य एक ऐसी वस्तु है जो न तो किसी से उपहार स्वरूप मिलती है और न ही आप इसे किसी को भेंट कर सकते हैं। इसके लिए आपको स्वयं ही प्रयत्न करना पड़ता है। आपके स्वास्थ्य के प्रति सतत जागरूक रहने के पश्चात् भी काल अपना प्रभाव छोड़ता ही है और ऋतु परिवर्तन का प्रभाव आपके स्वास्थ्य पर पड़ता ही है। सफल गर्भाधान, सुखी गर्भावस्था एवं सुरक्षित प्रसव के लिए आवश्यक है कि स्त्री स्वस्थ हो, उचित पोषण हो, पुरुष बीज स्वस्थ हो तथा काल (ऋतु) भी अनुकूल हो। आपको यह जानकर शायद आश्चर्य होगा कि गर्भाधान जब हुआ है वह काल भी इसके परिणाम के लिए उत्तरदायी होता है। ग्राम्य धर्म (सम्भोग) निर्वाह कब हो यह तो आपके वश में है परन्तु एक बार गर्भाधान होने के पश्चात काफी कुछ काल चक्र के अधीन हो जाता है।

हमारी प्राचीन संहिताओं में सम्पूर्ण वर्ष को छह ऋतुओं में विभक्त किया गया है। प्रत्येक ऋतु दो-दो मास की होती है। ये

ऋतुएँ हैं –

शिशिर – जनवरी प्रारम्भ से मार्च प्रारम्भ तक।

बसन्त – मार्च प्रारम्भ से – मई प्रारम्भ तक।

ग्रीष्म – मई प्रारम्भ से जुलाई प्रारम्भ तक।

वर्षा – जुलाई प्रारम्भ से सितम्बर प्रारम्भ तक।

शरद – सितम्बर प्रारम्भ से नवम्बर प्रारम्भ तक।

हेमन्त – नवम्बर प्रारम्भ से जनवरी प्रारम्भ तक।

इन सभी ऋतुओं में खान-पान रहन-सहन भिन्न-भिन्न प्रकार का होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि एक ही वस्तु एक ऋतु में लाभकर है तो दूसरी में हानिकर। यह लाभ हानि बहुत कुछ बाह्य वातावरण और बहुत कुछ व्यक्ति की शारीरिक स्थिति पर निर्भर करती है।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रसूति तन्त्र विभाग में हुए एक अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि गर्भाधान एवं प्रसव प्रक्रिया में ऋतुएँ भी अपना प्रभाव छोड़ती हैं। अतः यदि आप चाहती हैं कि आपकी गर्भावस्था अपेक्षाकृत निर्विघ्न बीते तो गर्भिणी को उचित आहार-विहार के साथ विभिन्न ऋतुओं में बताई दिनचर्या का पालन करना चाहिए। संक्षिप्त दिनचर्या इस प्रकार है –

शिशिर ऋतुचर्या

इस ऋतु में शारीरिक बल उत्तम रहता हे। अतः पाचन शक्ति ठीक रहती है। अतः दूध की बनाई चीजों का सेवन करें। वसा, तेल तथा नये चावल को खाएँ। गर्भाधान के लिये यह समय अनुकूल है अतः इच्छानुसार ग्राम्यधर्म का निर्वाह करें।

वायु के अधिक सेवन व वातज तथा लघु आहार न करें।

बसन्त ऋतुचर्या

काल प्रभाव से इस ऋतु में शारीरिक बल मध्यम होता है। मन्दाग्नि रहती है तथा अनेकों रोग उत्पन्न हो सकते हैं। सोंठ आदि

से पकाया पानी पीयें। इस समय का गर्भाधान इतना सफल नहीं होता है जितना कि शिशिर ऋतु का अतः वाग्भट ने इस ऋतु में मर्यादित अर्थात् १५–१५ दिन के अन्तराल से सम्भोग उचित बताया है। इस समय यदि किसी स्त्री को प्रसव होता है तो उसके भी कष्ट पूर्वक होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

इस ऋतु में अति सम्भोग, दिन में सोना तथा गुरु और मधुर अन्नपान त्यागना चाहिये।

ग्रीष्म ऋतुचर्या

इस ऋतु में शारीरिक बल दुर्बल रहता है अतः इस ऋतु में शीतल अन्नपान लाभकर है। इस समय

के गर्भाधान के असफल (गर्भपात) होने की अधिक सम्भावना होती है अतः इस ऋतु में कामेच्छा से दूर रहना चाहिए।

वर्षा ऋतुचर्या

इस ऋतु में भी शरीर दुर्बल ही रहता है। जठराग्नि भी दुर्बल हो जाती है। इस ऋतु में अम्ल तथा लवण का सेवन लाभकर है। मधु का प्रयोग भी लाभदायक है। इस ऋतु में भी जहाँ तक हो गर्भाधान से बचना चाहिये अतः मर्यादित सम्भोग करें।

वर्षा ऋतु में दिन में सोना, ओस में सोना, तथा धूप का सेवन नहीं करना चाहिये।

शरद ऋतु

इस ऋतु में शारीरिक बल मध्यम ही रहता है अतः लघु खान–पान कषाय, मधुर, तिक्त रस का सेवन करें। अल्पाहार करें। इस समय का गर्भाधान हेमन्त और शिशिर के गर्भाधान जैसा सुरक्षित तो नहीं होता है परन्तु फिर भी गर्भाधान के लिए यह समय ग्रीष्म और वर्षा ऋतु से कुछ उत्तम है।

हेमन्त ऋतुचर्या

इस ऋतु की विशेषता यह है कि इसमें व्यक्ति का शारीरिक बल श्रेष्ठ रहता है। पाचन उत्तम होता है गरिष्ठ भोजन भी पच जाता है। इस समय गर्भाधान के लिए ऋतु अनुकूल होती है अतः यथेच्छ ग्राम्य धर्म (सम्भोग) का निर्वाह किया जा सकता है। यदि इस समय गर्भधारण हो जाएं तो सामान्य स्त्री में गर्भपात की सम्भावना बहुत कम होती है।

इस समय वातल आहार एवं अल्पाहार न करें।

इस प्रकार आप थोड़ी सूझ–बूझ से, सही समय में सही निर्णय लेकर सफल गर्भाधान कर, स्वस्थ गर्भावस्था एवं सुरक्षित प्रसव को सुनिश्चित कर पारिवारिक जीवन का सुख भोग सकती हैं।

लिव–इन्स **वाल पेपर**

वाल कवरिंगस **दिवाल कागज़**

खूबसूरत किफायती टिकाऊ

लगाने में आसान

न धूल न रंग के छींटे

न साफ सफाई की खटपट

काम हो इतने सस्ते में

और उतनी ही झटपट!

श्री विन्ध्या पेपर मिल्स लिमिटेड,

इण्डियन मर्केण्टाइल चेम्बर्स, तीसरा महला,

१४ आर. कमानी मार्ग,

बम्बई – ४०० ०३८.

प्रकुपित पित्त की पहचान रोकथाम एवं उपचार

आयुर्वेदाचार्य एस.ए. खान, लखनऊ

पिछले अंक में हम सामान्य (प्राकृत) पित्त और उसके कार्यों का वर्णन कर चुके हैं। अब हम बढ़े हुए और प्रकुपित पित्त का वर्णन करेंगे। बढ़े हुए और प्रकुपित दोषों (वात, पित्त और कफ) की सीमा रेखा तय करना मुश्किल है। दोष कोपक निदानों (मिथ्या आहार–विहार एवं प्रज्ञापराध) के सेवन से पहले दोषों की वृद्धि (संचय) होती है फिर प्रकोपक कारणों (अग्निमांद्य, ऋतु, काल, उम्र आदि) एवं लगातार निदान सेवन से वात, पित्त, कफ प्रकोपावस्था में आ जाते हैं। यही प्रकोपावस्था रोग पैदा करने में सक्षम होती है। यदि प्रकोपावस्था में ही रोग उत्पन्न करने (व्यक्ति) से पहले शरीर से दोषों का निर्हरण, शोधन या शमन कर दिया जाये तो प्रकुपित दोष प्रकोपावस्था से उल्टे क्रम में चलकर वृद्धि और फिर सामान्य अवस्था में आ जाते हैं।

शरीर में पित्त के प्रकुपित और बढ़े होने पर निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं–

विस्फोटक – शरीर में फोड़े, फुंसी, विद्रधि आदि निकलने लगते हैं। दाहपूर्वक अंगों (हाथ–पैरों) का फटना भी विस्फोटक के अन्तर्गत आता है।

अम्लता – पित्त वृद्धि होने पर मुँह में खट्टापन बना रहता है। दाँत खट्टे हो जाते हैं।

धूमका – गले में धुआँ सा उठना।

प्रलाप (बकझक)– कुछ बीमारियों में तथा तीव्र ज्वर आदि में रोगी ऊट–पटांग बकने लगता है या मानसिक रोगों में भी प्रलाप करता है। यह लक्षण पित्त के प्रकोप में होता है।

स्वेद (पसीना) निकलना – पित्त की प्रकोपावस्था में पसीना अधिक निकलता है जैसे तीव्र ज्वर में।

मूर्च्छा – पित्त का प्रकोप होने पर मूर्च्छा (बेहोशी) हो जाती है। इस मूर्च्छा में पसीना भी आता है। जैसे अधिक गरमी, भीड़ और घुटन वाले स्थानों पर कुछ कमजोर लोगों को मूर्च्छा हो जाती है। यह पित्त वृद्धि या प्रकोप के कारण ही होती है।

दुर्गन्ध – पित्त प्रकोप होने पर एक विशेष प्रकार की दुर्गन्ध हो जाती है। यह दुर्गन्ध मल, मूत्र, साँस या पसीने में पायी जाती है। पित्तज ज्वर के रोगी के पास बैठने मात्र से इस दुर्गन्ध से पित्तज ज्वर की पहचान की जा सकती है।

फटना – हाथ, पैर और त्वचा का फटना भी पित्त प्रकोप का लक्षण है। परन्तु इसके साथ दाह अवश्य होता है।

मद (नशा) – पित्त प्रकोप में दिमाग में एक प्रकार का नशा सा छाया रहता है। भांग, धतूरा और शराब पीने पर जो नशा चढ़ता है वह भी इन पदार्थों के सेवन से बढ़े हुए पित्त के कारण ही होता है।

विस्र गन्ध – गन्ध पित्त प्रकोप में सड़े मांस की सी मल, मूत्र में आने लगती है। कभी जीर्णपित्त के रोगी से भी ऐसी गन्ध आती है।

पाक (पकना) – पित्त प्रकोप के कारण शरीर के बाहरी या आन्तरिक किसी भी भाग में पाक (पकना) या विद्रधि हो सकती है। बिना पित्त प्रकोप के कोई भी व्रण नहीं हो सकता है। मुख पाक, गुद पाक भी इसी का लक्षण है।

अरति (बेचैनी) – इसमें मनुष्य बेचैन रहता है किसी भी कार्य में उसका मन नहीं लगता।

पिपासा – प्यास का लगना भी पित्त वृद्धि का लक्षण है। यदि सामान्य रूप से पानी आदि पीने पर भी प्यास शांत न हो तो पित्त

प्रकोप समझना चाहिये।

ताप का बढ़ना – शरीर में ताप पित्त के बढ़ने और प्रकुपित होने पर ही बढ़ता है। ज्वर का ताप पित्त के कारण ही बढ़ता है।

दाह(जलन) – हाथ, पैरों में पेट में मूत्र या मल करते वक्त जलन पित्त के कारण ही होती है। मल, मूत्र, पसीना, जीभ, तालु, नेत्रों, त्वचा आदि का रंग पीला हो जाना भी पित्त वृद्धि या प्रकोप का लक्षण है।

आँखों के आगे अन्धेरा छाना – पित्त प्रकोप होने पर आँखों के आगे अन्धेरा छा जाता है। कभी–कभी पीला–पीला सा दिखाई पड़ता है।

चक्कर आना – पित्त प्रकोप होने पर चक्कर आने लगते हैं। परन्तु ये चक्कर वात द्वारा उत्पन्न चक्करों से भिन्न होते हैं। वातज चक्करों में सर या चारों तरफ की वस्तुएँ घूमती हुई मालूम पड़ती हैं परन्तु पित्तज चक्करों में ऐसा नहीं होता है।

सड़ना – पित्त के बिना कहीं भी सड़न नहीं हो सकती है। चाहे आमाशय में व्रण हों, चाहे फेफड़ों में ज़ख्म हों, आँतों में अल्सर हो या त्वचा पर या कर्ण, नेत्र पर ज़ख्म हों सभी प्रकुपित पित्त के कारण ही उत्पन्न होते हैं।

अतृप्ति – पित्त वृद्धि होने पर भरपेट भोजन करने पर भी तृप्ति नहीं होती है। क्रोध, ईर्ष्या, दाह आदि मानसिक गुण पित्त प्रकोप में बढ़ जाते हैं।

पित्त प्रकोपक आहार (जिनके सेवन ये बचें)

कड़वे, खट्टे और नमकीन रसवाले पदार्थ।

उष्ण और तीक्ष्ण गुणवाले पदार्थ – जैसे सिरका, शराब, कांजी, अधिक खट्टा मट्ठा, दही, बियर, चाय, कॉफी, कहवा आदि खारी (क्षारीय) पदार्थों का सेवन।

विदाही पदार्थ : जैसे तली हुई चीजें (पूड़ी, पकौड़ी आदि) पिट्ठी वाली गरिष्ठ चीजें जैसे बड़ियाँ आदि जो खाने के बाद पेट में जलन पैदा करती हैं। कड़वा तेल, तिल, खट्टा दही, अलसी, सुखाई सब्ज़ी, मांस, मछली, अण्डा, लालमिर्च, खट्टे फल, दही बड़े, उड़द की दाल, कुल्थी, हींग, खटाई, जीरा, अजवायन, अधिक पाचक चूर्णों का प्रयोग, बासी भोजन, गुड़, राब, अचार, पापड़, करेला, बैंगन, मेथी का साग, कृत्रिम औषधियाँ।

पित्तवर्धक एवं प्रकोपक विहार

उपवास, धूप का अति सेवन, स्त्री प्रसंग, धुआँ, बदबूदार, सीलन वाले उष्ण स्थानों में रहना। शक्ति से अधिक शारीरिक श्रम करना, अधिक व्यायाम करना, बहुत उष्ण स्थान में रहना, अजीर्ण में भोजन करना, नित्य शारीरिक सफाई न करना, गन्दे कपड़े पहने रहना, भूख लगने पर खाना न खाना, प्यास लगने पर पानी न पीना, टी.वी., वीडियो अधिक देखना, रात्रि जागरण करना।

पित्त प्रकोपक काल – पित्त प्रकोपक काल में पित्तवर्धक निदानों का सेवन न करें। बल्कि उल्टा पित्तशामक आहार–विहार का सेवन करें। पित्त प्रकोप काल निम्न हैं –

– भोजन के बाद भोजन पचने के समय का काल।

– शरद ऋतु – इस ऋतु में स्वाभाविक रूप से पित्त प्रकोप होता है।

– ग्रीष्म काल – इस काल में गरमी अधिक पड़ने से पित्त की वृद्धि हो जाती है। दूषित जल तथा वायु भी पित्त वर्धक हैं।

– मध्यान्ह काल (दोपहर का समय)

– आधी रात्रि का समय

– युवावस्था

– उष्ण काल, उष्ण देश, गन्दगी, वर्षा ऋतु।

पित्त प्रकोप के मानसिक कारण

निम्न मानसिक कारणों का भी त्याग करना चाहिये – अहंकार, क्रोध, डाह, जलन, शोक, दूसरों का बुरा चाहना, कुढ़ना और असन्तोषजनक जीवन जीना।

प्रकुपित और बढ़े हुए पित्त को शमन करने के उपाय : इन उपायों द्वारा प्रकुपित और बढ़े हुए पित्त के कुप्रभाव नहीं पड़ेंगे और स्वस्थ रहना सम्भव होगा :–

मधुर, तिक्त और कसैले रस वाले पदार्थों का सेवन करें। यदि पित्तज प्रकृति के हो तो विशेष ध्यान रखें।

त्रिफला, षट्सकार, पंचसकार चूर्ण जैसी औषधियाँ या मुनक्का, हरड़, एरण्ड तेल आदि से रेचन (जुलाब) लें। ठंडे, हवादार, बगीचे युक्त स्थान पर रहें, चन्द्रमा के प्रकाश में मनोरंजन करें।

उपयुक्त पित्त प्रकोपक आहार–विहार व मानसिक कारणों का त्याग करें और इनके विरोधी वस्तुओं का सेवन करें।

घी, दूध, मीठे फल, पुराने अन्न, मुनक्का, खजूर, अंगूर, आम, केला, सेब, खीरा, तथा जीवनीय द्रव्य और पौष्टिक व बृंहण द्रव्यों का सेवन करें।

शुचिता पूर्ण, शान्त और सच्चे इन्सान की जिन्दगी जियें।

मुलेठी के औषधीय उपयोग

वैद्य र.म. नानल, मुंबई

– मुलेठी चूर्ण, दो भाग घी और एक भाग शहद मिलाकर चाटकर ऊपर से गुनगुना दूध पीने से वाजीकरण होता है, इस चूर्ण में एक रत्ती रससिंदूर या सुवर्णसिंदूर मिला लेने से औषध और भी प्रभावशाली हो जाता है।

– मुलेठी, गिलोयसत्व, अतीस और वचा को उपयुक्त मात्रा में मिलाकर उपयुक्त मात्रा में सेवन कराने से बच्चों का सूखा रोग नष्ट होता है।

– मुलेठी और तिल को एक साथ पीसकर मिश्री और शहद के साथ लेने से रक्त प्रवाहिका (खूनी पेचिश) बन्द होती है।

– मुलेठी तथा पिप्पली का चूर्ण दूध के साथ लेने से खूनी पेचिश और मरोड़ दूर होती है।

– शहद के साथ मुलेठी चूर्ण चाटने और मुलेठी चूर्ण तथा नारियल की जटा को उपलों पर रखकर सिर पर कपड़ा रखकर नाक और मुंह से धुआं लेने से हिचकियां बंद होती हैं। तुरन्त लाभ होता है। शहद में मुलेठी चूर्ण मिलाकर उसका नस्य भी ले सकते हैं।

– भाषण, कीर्तन आदि के प्रसंग में तेज आवाज में बोलने और गाने से गला बैठ जाता है। ऐसी स्थिति में मुलेठी और मिश्री अथवा केवल मुलेठी का सत्व मुंह में रखें। कालीमिर्च चूर्ण और मुलेठी चूर्ण मिलाकर शहद के साथ चाटें।

– आंवला पाक के साथ मुलेठी चूर्ण का सेवन करने से रक्तप्रदर दूर होता है।

– खून की उल्टी में मुलेठी चूर्ण तथा लालचंदन का चूर्ण दूध के साथ दें।

– रक्तपित्त में, विशेष रूप से अधोग रक्तपित्त में मुलैठी चूर्ण २० ग्राम, दूध १६० मि.ली. और ६४० मि.ली. पानी को उबालकर १६० मि.ली. शेष रहने पर उतार लें और सुबह शाम मिश्री मिलाकर लें।

– कुक्कुरखाँसी में मुलेठी का सत गाय के दूध के साथ दिन में तीन बार दें।

– लहसुन या शराब की बू मुंह से आने पर मुंह में एक टुकड़ा मुलेठी रख लेने से बदबू जाती रहती है।

– एक चम्मच मुलेठी चूर्ण को दो कप पानी में उबालकर छानकर सुबह शाम गरारा करने और मुलेठी चूर्ण को घी में सानकर दिन में तीन चार बार मुंह के अंदर के चट्टों पर लगाने से मुखपाक दूर होता है।

– मुलेठी चूर्ण और सितोपलादि चूर्ण को दोषानुसार अनुपान के साथ दिन में तीन–चार बार लेने से खांसी दूर होती है।

– मुलेठी और दारूहरिद्रा एक–एक तोला लेकर उसका कल्क बना लें फिर उसमें नीम की पत्तियों का रस १६ तोला, तिल का तेल ८ तोला और पानी १६ तोला मिलाकर उबालें। तेल मात्र शेष रहने पर छानकर बोतल में भर लें। यह घाव भरने के लिए उत्तम औषध है। कानों के बहने पर कान साफ कर उनमें इस तेल को टपकाएं।

– खूनी बवासीर में मुलेठी २ माशा, हरड़ के पत्ते २ माशा, मुनक्का ६ नग, अडूसा के पत्ते पांच नग को एक कप दूध में खूब उबालकर छान लें और उसमें मिश्री डालकर सुबह–शाम लें। बवासीर का रक्तस्राव इससे रूक जाता है और खांसी, प्यास और श्वासकष्ट भी दूर होता है।

– निमोनिया में मुलेठी चूर्ण ८ रत्ती, सितोपलादि चूर्ण ४ रत्ती, श्रृंगभस्म एक रत्ती और रससिंदूर एक रत्ती मिलाकर देने से कफज्वर में कफ का शोधन होकर उसका स्राव होता है।

– एक तोला मुलेठी, १० नग अडूसा के पत्ते और तुलसी की २० पत्तियों को ४ कप पानी में उबालकर एक कप शेष रहने पर मिश्री मिलाकर सुबह शाम लेने से कफ निकलने में होनेवाला कष्ट, कड़ा और बदबूदार कफ गिरना आदि उपद्रवों में अच्छा लाभ होता है।

– बालों का झड़ना रोकने के लिये नित्य स्नान से आधे घंटे पूर्व मुलेठी और तिल को भैंस के दूध में पीसकर लगायें। साबुन का प्रयोग न करें। यदि आवश्यक प्रतीत हो तो शिकाकाई लगा लें।

– स्तनों में दुग्ध की वृद्धि के लिए मुलेठी व शतावर चूर्ण ३–३ माशे लेकर मिश्री और दूध के साथ सुबह शाम महीने भर लें।

– भूख बढ़ाने और पेट की गैस निकालने के लिए १ तोला मुलेठी, १ तोला सौंफ, ४ माशे शुद्ध गंधक और १ तोला सनायचूर्ण लेकर कपड़छन करके रख लें और नित्य रात में सोने से पूर्व आधा चम्मच लें।

अनुरोध : *पाठकगण मुलेठी का औषधोपयोग करने के बाद कृपया अपने खट्टे–मीठे अनुभवों से हमें अवगत करायें।*

पाण्डु रोग

रक्ताल्पता

वैद्य प्रमोद कुमार श्रीवास्तव, गोरखपुर

जिस रोग में बिना किसी विशेष उपाय का अवलम्बन किये, दर्शन मात्र से ही शरीर के पाण्डु वर्ण से रोग का ज्ञान हो जाए उसे पाण्डु रोग कहते हैं। पाण्डु रोग एक वर्ण परक संज्ञा है।

शरीर का रंग उचित परिमाण में शुद्ध रक्त पर आधारित है। रक्त की कमी अथवा उसमें दोष आ जाने से रंग में अनेकानेक परिवर्तन हो जाते हैं। रक्त में लौह तत्व की कमी के कारण शरीर में पीलापन आ जाता है। किसी भी कारण से रक्त निर्माण न होने अथवा रक्त के अन्तर्गत लौह तत्व की कमी हो जाने अथवा कृमियों द्वारा रक्त चूसने से भी पाण्डु रोग की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

अति क्षारीय, अम्लीय, लवण, अत्यधिक उष्ण, प्रकृति–विरुद्ध अपथ्य आहारों के सेवन करने से, सेम, उड़द, खली, तिल का तेल सेवन करने से, दिन में शयन करने से, अधिक व्यायाम एवं मैथुन करने से, मल–मूत्र के वेगों को रोकने से, काम, क्रोध, चिन्ता, भय, शोक से आक्रांत चित्त वाले व्यक्तियों में धमनियों द्वारा हृदय प्रदेश में रहने वाला पित्त बढ़ कर सम्पूर्ण शरीर में फैल कर त्वचा के ऊपर हल्दी जैसा वर्ण उत्पन्न करने के कारण होता है।

पाण्डु रोग के सामान्य लक्षण

पाण्डु रोग के हो जाने पर सभी रोगियों में बिना शब्द हुए ही कानों से शब्द सुनायी देना, मन्दाग्नि, दुर्बलता, शरीर में शिथिलता, भोजन की अनिच्छा, थकावट, चक्कर आना, ज्वर, गुरुता, शरीर में पीड़ा, अक्षिकूट में शोथ, कृशता, शरीर की कांति में नाश, क्रोध, शीतल वस्तुओं से द्वेष, बार–बार थूकना, शान्त रहना आदि पाण्डु रोग के सामान्य लक्षण हैं।

पाण्डु रोग की असाध्यता

जीर्ण पाण्डु रोगी, सर्वांग शोथ युक्त, आकाश को पीला देखने वाला, श्वेत वर्ण से युक्त शरीर वाला, दीन–हीन एवं अत्यन्त रूक्ष एवं वमन, मूर्च्छा और प्यास से आक्रांत पाण्डु रोगी असाध्य होते हैं।

पाण्डु रोग की चिकित्सा

सामान्य चिकित्सा

स्नेहन चिकित्सा :– पाण्डु रोग में शरीर के स्नेह का क्षय बताया गया है। अतः स्नेहन कराना चाहिए। स्नेहन से स्रोतों में मृदुता आती है और रूक्षता नष्ट हो जाती है।

स्नेहन के लिए पंचगव्य घृत, महातिक्त घृत, कल्याण घृत, दाड़िमाद्य घृत, कटुकाद्य घृत, दन्ती घृत, द्राक्षा घृत तथा हरिद्रा घृत में से किसी एक का २० से ४० ग्राम की मात्रा में दिन में दो या तीन बार प्रयोग करना चाहिए।

शोधन चिकित्सा : सामान्य रूप से पाण्डु रोगी को वमन का निषेध किया गया है किन्तु यदि कफ और आम के लक्षण अधिक हों तो देश, काल, ऋतु, तथा रोगी की प्रकृति एवं बल को देखकर वमन कराया जा सकता है।

वमनार्थ: पाण्डु रोगी में "धामार्गव" वमन के लिये अधिक उपयोगी पाया गया है।

विरेचन : पाण्डु रोगी में विरेचन दोषानुसार उपयुक्त रहता है।

विरेचन क्रम : वातज पाण्डु में – गोदुग्ध अथवा गोमूत्र युक्त दूध पिलाना चाहिए, अथवा दन्ती क्वाथ में मुनक्के का कल्क मिलाकर पिलाना चाहिए।

पित्तज पाण्डु में त्रिवृत् चूर्ण से विरेचन कराना चाहिए।

कफज पाण्डु में हरीतकी चूर्ण से विरेचन कराना चाहिये।

संसर्जन क्रम : यूषों के साथ जीर्ण शालि चावल, यव एवं गेहूँ की रोटी अथवा चना, मसूर का यूष देना चाहिये।

कोष्ठ शुद्धीकरण : रोगी में कोष्ठबद्धता को यथाशीघ्र दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये। प्रतिदिन रोगी को त्रिफला, कुटकी, निशोथ, इनमें से एक या इनसे बने योगों का सामान्य रूप

से व्यवहार करना चाहिये।

रोगी को पीने के लिये "पुनर्नवा" से सिद्ध जल देना चाहिये। इसके अतिरिक्त ५० मि.ली. गोमूत्र भी पिलाया जा सकता है।

रोगी को नमक का प्रयोग बन्द करा देना चाहिये। रोगी को गोदुग्ध पर्याप्त मात्रा में सेवन कराना चाहिये। गाजर एवं मूली का प्रयोग लाभकर है।

मृत्तिका भक्षण से कृमि का प्रकोप होने पर विडंगादि तेल, अतीस एवं कुटकी का प्रयोग करने पर विरेचन होकर कृमि नष्ट हो जाते हैं।

पाण्डु रोग की औषधीय चिकित्सा निम्न आधार पर व्यवस्थित करनी चाहिये–

वातज पाण्डु रोग में स्निग्ध चिकित्सा व्यवस्था।

पित्तज पाण्डु रोग में तिक्त एवं शीतल औषधि व्यवस्था।

कफज़ पाण्डु रोग में कटु, रूक्ष, उष्ण चिकित्सा व्यवस्था।

सन्निपात पाण्डु रोग में मिश्रित चिकित्सा व्यवस्था।

मृत्तिकाजन्य पाण्डु में मिश्रित चिकित्सा + कृमि चिकित्सा + निदान परमार्जन (कारण की चिकित्सा)।

उपरोक्त आधार पर चिकित्सा व्यवस्था करने पर रोगी यथाशीघ्र आरोग्य लाभ कर लेता है।

पथ्य

पुराना गेहूँ, शालि चावल, मूँग, अरहर, माष की दाल का यूष, जंगल में चरने वाले पशु–पक्षियों का माँस रस, परवल, कच्चा केला, चौलाई, पुनर्नवा, गूमा, बैंगन, लहसुन, प्याज, हर्रे, गोमूत्र, आँवला, मट्ठा, घी, पाण्डु रोग से पीड़ित व्यक्तियों के सेवन योग्य हैं।

अपथ्य

धूम्र पान, अधारणीय वेगों को रोकना, स्वेदन कर्म, मैथुन, मटर आदि शिम्बीधान्य, उड़द, अधिक जल, तिल की खली, मिट्टी खाना, दिन में शयन, कडुए पदार्थ, तीक्ष्ण पदार्थ, लवण, खट्टी वस्तु, दूषित जल, असात्म्य आहार, अग्नि के पास बैठना, धूप सेवन, व्यायाम, क्रोध, अत्यधिक चलना–फिरना, पाण्डु रोगी के लिये सर्वथा विष के समान है।

अगला हेमंत अंक

वृद्धावस्था पर विशेष आकर्षण

वृद्धावस्था में मन छोटा न करें
गर्दन में दर्द–रोकथाम एवं सरल उपचार
बलदायक अश्वगंधा
जोड़ों के दर्द की औषधियाँ
भय का भूत भगाइए
अम्लपित्त–खट्टी डकारों से बचाव
खाद, स्वास्थ्य एवं पर्यावरण
दूध और उसके व्यंजन
सौंदर्यदायक कस्तूरी
गुणकारी लहसुन

तथा अन्य सामग्री सभी स्थायी स्तंभों के साथ

हमारे प्रमुख वितरक

मै. पुष्पक सेल्स एजेन्सी
२५१, डबल स्टोरी, वेलकम कालोनी, सीलमपुर, जी. टी. रोड, दिल्ली

श्री आर. ए. दुबे एंड सन्स
१०७, बादशाही मंडी, इलाहाबाद

मै. अलका न्यूज एजेन्सी
रेलवे स्टेशन, कानपुर

मै. एस. के. न्यूज एजेन्सीस,
घंटाघर, कानपुर

मै. विद्या मंदिर,
सी–४७/१३७, रामपुरा, वाराणसी

बशीर बुक स्टाल
रोडवेज स्टेशन, हरदोई

श्री अशोक कुमार अरोड़ा
रेलवे बुक स्टाल, मुरादाबाद

पाकेट बुक सेंटर
रिलीफ रोड, अहमदाबाद

बड़ौदा बुक सेंटर
बड़ौदा

आर्य वैद्य फार्मेसी
३६६, त्रिची रोड, कोयम्बटूर

गोयल इन्टरप्राइजेज
माटुंगा, बम्बई

नेशनल बुक सेन्टर
महाजन मार्केट, सीताबर्डी, नागपुर

ऐलर्जी
(प्रत्यूर्जता)

डॉ. दिनेश सिंह, लखनऊ

आधुनिक युग में ऐलर्जी एक सुपरिचित बीमारी का नाम है। किसी को धुएँ से ऐलर्जी होती है, किसी को इत्र से, किसी को सिन्थेटिक कपड़ों से और किसी को खान-पान से। प्रयोगों द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि ऐलर्जी जठराग्नि के मन्द होने से उत्पन्न होती है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के अनुसार यदि ऐसे द्रव्य का सेवन किया जाए जो शरीर के लिए असात्म्य या प्रतिकूल हो तो शरीर के अनुकूल न होने के कारण रक्त में पहुँचने के पश्चात् वह अपनी प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है। जिसके परिणाम स्वरूप शरीर में कुछ वैकारिक लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। इसे ही हम ऐलर्जी या प्रत्यूर्जता कहते हैं। यह विकृति रोग प्रतिकार-क्षमता के घट जाने पर होती है।

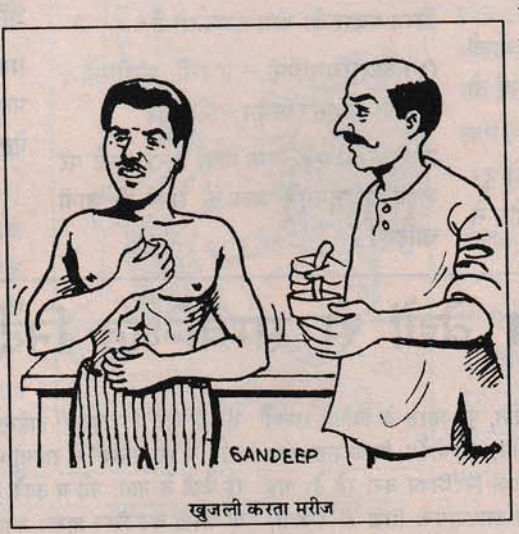

खुजली करता मरीज

सामान्यतया जब त्वचा पर अचानक किसी प्रकार का आघात लगता है या त्वचा किसी रसायन के सम्पर्क में आ जाती है अथवा कीट-पतंगे आदि काट लेते हैं तो वह तुरन्त रक्त-वर्ण की हो जाती है तथा चकत्ते निकल आते हैं। परन्तु यदि बार-बार ऐसा होता रहे तो कालान्तर में इसका प्रभाव त्वचा पर नहीं पड़ता और वह रक्त वर्ण की नहीं होती। उसी प्रकार किसी असात्म्य द्रव्य को बार-बार सेवन करने से उस द्रव्य का शरीर पर उक्त वैकारिक लक्षण दिखाई नहीं पड़ता है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी ऐलर्जी के विषय में यही विचार रखता है और आयुर्वेद के विख्यात विज्ञान महर्षि चरक ने भी इसी बात की पुष्टि की है।

"असात्म्यमपि क्रमेणोपयुज्यमानमदोषं भवति"।

अर्थात् असात्म्य द्रव्यों का क्रमपूर्वक सेवन करने से वे क्रमशः दोष रहित हो जाते हैं।

"रोगाः सर्वेपिमन्दे ग्नौ"।

अर्थात् सभी रोग अग्नि मन्द होने पर उत्पन्न होते हैं। यह आयुर्वेद का एक सामान्य सिद्धान्त प्रतिपादित है। महर्षि चरक ने कहा है-

"अग्निदोषान्मनुष्याणां रोगसंघाःपृथग्विधाः"

अर्थात् मनुष्य में अग्नि दोष उत्पन्न होने के फलस्वरूप अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

वाग्भट्ट ने भी इसका प्रतिपादन किया है।

"प्रतिज्ञा वाग्भट्टस्यें न मन्दाग्नि विना रुजः"

अर्थात् मन्दाग्नि के बिना कोई रोग उत्पन्न नहीं होता है।

आधुनिक मतानुसार जब प्रोटीन द्रव्यों का पाचन पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है तो वह पूर्ण रूप से अमीनो ऐसिड्स के रूप में परिवर्तित न होकर अर्धपक्व या आम अवस्था में अर्थात् पेप्टाइड के रूप में ही जब रक्त में प्रवेश कर जाती है तो उससे ऐलर्जी की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसका अर्थ यह हुआ कि जठराग्नि की मन्दता के कारण आहार का परिपाक उचित रूप से न होने के कारण जो अपक्व या अर्धपक्व रस निर्मित होता है, जिसे आयुर्वेद में आम विष कहा गया है। जब कफ दोष के साथ मिलकर रस धातु के द्वारा सम्पूर्ण शरीर में भ्रमण करता है, तो त्वचा के नीचे पहुँच कर वह रसायनों में अवरोध उत्पन्न कर देता है जिसके परिणाम स्वरूप रस त्वचा के नीचे संचित हो जाता है जिससे त्वचा पर उभार उत्पन्न होकर वहाँ पर चकत्ते या ददोरे

से बन जाते हैं।

यकृत के कार्यों में विषमता होने से भी ऐलर्जी के होने की प्रबल सम्भावना होती है। आधुनिक मतानुसार यकृत ही अग्नि का प्रधान स्थान है और वह भी आहार के परिपाक एवं चयापचयी क्रिया में भाग लेता है। इसके अतिरिक्त यह रक्त में स्थित विष का निर्हरण करता है अर्थात् पित्त द्वारा उन्हें शरीर से बाहर निकाल देता है। अतः रक्त में जब हिस्टामिन आदि विष द्रव्य उत्पन्न होते हैं तो यदि यकृत उन्हें अपने प्राकृतिक कर्म द्वारा शीघ्रतापूर्वक शरीर के बाहर निष्कासित नहीं कर देता तो ऐलर्जी उत्पन्न हो जाती है।

ऐलर्जी में उपयोगी आयुर्वेदिक औषधि

इस रोग में जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाली अर्थात् दीपन–पाचन औषधियाँ दी जाएँ तो रोगी को अवश्य लाभ होता है–

इसी प्रकार जो द्रव्य यकृत विकार को दूर करे तथा उसका शोधन करे उसके प्रयोग से भी ऐलर्जी का शमन होता है।

त्रिफला, कुटकी, गुडूची, दारुहरिद्रा आदि द्रव्य यकृत का शोधन करके उसकी विकृति को दूर करते हैं। इसके समुचित प्रयोग से ऐलर्जी का प्रकोप शांत होता है।

आयुर्वेदीय विकृति विज्ञान के अनुसार ऐलर्जी रस रक्त दोषज विकार है जिसका स्थान संश्रय एवं अभिव्यक्ति स्थान त्वचा है। इसलिए इसमें रक्त शोधन एवं कफ शामक चिकित्सा दी जाती है जिससे तत्काल लाभ होता है।

मंजिष्ठा, खदिर, गन्धक आदि द्रव्यों और उनसे निर्मित योगों का इस व्याधि पर अच्छा प्रभाव देखा गया है।

चिकित्सा

निम्न प्रकार के योग गुणकारी हैं–

(१) आरोग्यवर्धिनी – २ रत्ती, संजीवनी – २ रत्ती, गंधक रसायन – २ रत्ती।

उपरोक्त की एक–एक मात्रा ४–४ घण्टे पर शहद या गुनगुने जल के साथ दी जानी चाहिए।

(२) सारिवाद्यासव – २ तोला

समान जल के साथ भोजनोपरांत दो बार लें।

(३) त्रिफला चूर्ण – ३ माशा

रात में सोते समय गरम दूध के साथ लें।

यदि ऐलर्जी जनित श्वास रोग हो तो उक्त चिकित्सा के साथ श्वास की भी चिकित्सा की जानी चाहिए। इसी प्रकार अन्य विकृतियाँ होने पर उनके शामक योगों के साथ उपर्युक्त योग दिये जाने चाहिएँ।

ऐलर्जी रोग में अपथ्य : उड़द, आलू, चावल, केला, कद्दू, दही आदि रोगी को नहीं देना चाहिए। जठराग्नि को मन्द करने वाले श्लेष्मवर्धक, गुरु, विष्टम्भी, मधुररस प्रधान द्रव्य भी ऐलर्जी के रोगी को वर्जित हैं।

पथ्य आहार : लघु, सुपाच्य, अग्निदीपक, पाचक एवं श्लेष्माशामक आहारद्रव्य ऐलर्जी के रोगी के लिए लाभप्रद हैं।

प्रमुख वैद्यों से सम्बन्धित निर्देशिका

हम, लोक स्वास्थ्य परंपरा संवर्धन समिति, पूरे भारत के विभिन्न राज्यों में कार्यरत प्रमुख वैद्यों, सिद्ध वैद्य, हकीम, हौम्योपैथ चिकित्सक तथा पारम्परिक लोक चिकित्सक से संबधित एक निर्देशिका बना रहे हैं। यह निर्देशिका हमारे पाठकों के लिए काफी लाभदायक सिद्ध हो सकेगी, क्योंकि इसकी सहायता से पाठक आवश्यकता पड़ने पर उन वैद्यों के कार्य क्षेत्र के बारे में जानकारी हासिल कर, उनसे संपर्क व सलाह ले सकेंगे। इस कार्य में हम पाठकों से सहयोग चाहेंगे कि वे हमको अपने क्षेत्र में कार्य कर रहे वैद्यों के नाम, पते व उनके कार्य करने का विषय आदि एक पोस्ट कार्ड पर लिख कर निम्न प्रारूप बनाकर भेजें :–

१. अपना नाम व पता तथा जीवनीय का सदस्यता क्रमांक (नं.)

२. नाम पता शिक्षा वैद्य/पारंपरिक चिकित्सक के कार्य क्षेत्र का नाम (विशेषता)

कृपया उन्हीं के नाम हमको भेजें, जिनके अनुभव का आपने या आपके परिवार के सदस्य अथवा मित्र ने, चिकित्सा कराकर लाभ उठाया हो। इस तरह की मदद से अन्य कई व्यक्ति भी इसका लाभ ले सकते हैं।

यदि आप हमें पांच वैद्यों के नाम व पते उपलब्ध कराएंगे तो हम आपको **उपहार में एक आकर्षक तुलसी का रंगीन पोस्टर** भेंट करेंगे।

पता : **जीवनीय,**
ई –III/२५९, सेक्टर –एच,
अलीगंज, लखनऊ २२६०२० उ.प्र.

स्वास्थ्य का रहस्य

अपक्वाहार

डॉ. बी.एस. बेदी, दिल्ली

पुराने युग में मानव अपक्वाहार लेकर अपना जीवन निर्वाह करता था क्योंकि उस काल में विज्ञान ने उन्नति नहीं की थी। ज्यों-ज्यों विज्ञान ने उन्नति की त्यों-त्यों प्राणी तले-भुने पदार्थों को अधिक स्वादिष्ट बनाकर खाने लगा और फिर रोग ग्रस्त होने लगा।

अपक्वाहार शक्तिवर्द्धक

वर्तमान युग में विभिन्न प्रकार के खाद्य उपलब्ध हैं। सब्जी को उबालकर पुनः चिकनाई में छौंक लगाकर उस समय तक पकाई जाती है जब तक वह बिल्कुल खुश्क न हो जाए और ऐसा करने से उसके पौष्टिक गुण नष्ट हो जाते हैं। सब्जी जिस पानी में उबाली जाती है वह पानी फेंक दिया जाता है। उसमें जीवन उपयोगी तत्व एवं प्राकृतिक लवण नष्ट हो जाते हैं। वैज्ञानिक खोज के अनुसार ताजे फल, हरी सब्जियाँ, मेवे इत्यादि में प्राकृतिक लवण, विटामिन, प्रोटीन तथा चिकनाई आदि तत्व बड़ी मात्रा में पाए जाते हैं और उसके उपयोग से शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य की ही रक्षा नहीं होती बल्कि मन में प्रसन्नता और शरीर में शक्ति भी पैदा होती है। पकाने की क्रिया द्वारा खाद्य को सुपाच्य बनाने का दावा किया जाता है पर प्रकृति तो उसे वृक्ष या पृथ्वी पर ही पका देती है। आग पर पकाने से उसके सब विटामिन नष्ट हो जाते हैं और कच्चा खाने पर वह फल या सब्ज़ी विटामिनों से भरपूर रहती है।

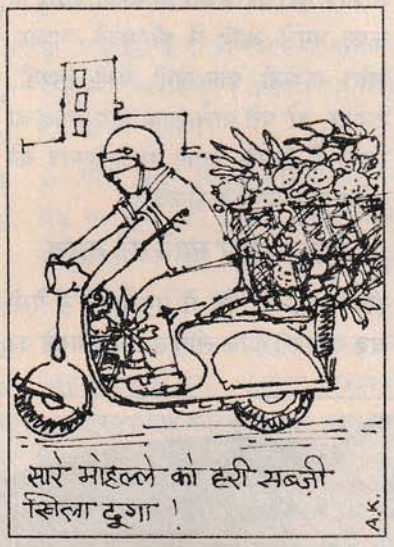

अपक्वाहार की अर्थनीति

कच्ची सब्ज़ी या फल खाने से श्रम एवं धन की बचत होती है और पकाने से ईंधन, आँच एवं धुएँ से तलते-भुनते खाद्य के विटामिन नष्ट हो जाते हैं जिससे खाने वाले को कोई लाभ नहीं होता है।

मुख, गला, दाँत : पित्त प्रकोप के कारण मुख में छाले पड़ गए हों या मुखपाक हो तो आँवले की छाल को घिसकर शहद से लेप करने से लाभ होता है। पत्तों के कषाय से गरारे करने से भी आराम मिलता है। आँवले में खाद्योज सी प्रचुर परिमाण में होता है। इसलिए स्कर्वी में यह बहुत उपयोगी होता है। जिन बच्चों के दाँत कमजोर हों, ठीक तरह से न निकलते हों, बहुत भंगुर हों या शीघ्र ही कीड़े से खाए जाते हों तो उन्हें रोज ताजा आँवला खाना चाहिए। आँवले को चबाने या दाँतों पर घिसने से दन्त रोगों में लाभ होता है।

आँवला 'सी' का प्रचुर स्रोत

जितना विटामिन 'सी' आँवला में रहता है उतना सम्भवतः किसी अन्य फल में नहीं होता है। ताजे आँवले के रस में नारंगी की अपेक्षा बीस गुना अधिक विटामिन 'सी' रहता है। फलों और सब्जियों को गर्म करने, पकाने या सुखाने से उनके विटामिनों का अधिकांश या प्रायः सम्पूर्ण अंश नष्ट हो जाता है परन्तु आँवला इस नियम का अपवाद है। पकाने पर भी इसका सब विटामिन नष्ट नहीं होता है। इसके तीन कारण हैं एक तो आँवले में इतना विटामिन होता है कि कुछ नष्ट होने पर भी काफी बच जाता है। दूसरे आँवले में खटास होती है और खटास विटामिन की रक्षा करती है और उसे नष्ट नहीं होने देती। तीसरे आँवले में कुछ अन्य पदार्थ भी हैं जो विटामिन 'सी' की रक्षा

करते हैं। इसलिए आँवले के मुरब्बे में भी कुछ विटामिन 'सी' रह जाता है। इनको सुखाकर खाने से भी विटामिन नष्ट नहीं होता।

जिगर के रोग

आँवले का चूर्ण यकृत और आमाशय के लिए बहुत गुणकारी है। सूखे आँवले का चूर्ण पाण्डु रोग, कामला और अजीर्ण के लिए उपयोगी है। श्वास संस्थान के लिए उपयोगी यह फल अति गुणकारी है। इसका विधि पूर्वक बनाया हुआ च्यवनप्राश बहुत ही गुणकारी होता है। कफ, पित्त, जुकाम, खाँसी में लाभकारी है। क्षय की प्रवृत्ति वाले प्राणी को प्रतिदिन च्यवनप्राश के सेवन से लाभ होता है। कैल्शियम, लौह, लवण तथा अनेक शक्तिप्रद औषधियों का मिश्रण होने से च्यवनप्राश सब अंगों की पुष्टि करता है और इसका नियमित सेवन शरीर में रोग प्रतिरोधक शक्ति पैदा करता है। मस्तिष्क के रक्त संचार में कुछ बाधा हो, सिर व नेत्रों में जलन हो या सिरदर्द आँवले का शुद्ध तेल सिर पर मलने से लाभ होता है। आँवले के जल से सिर धोना भी गुणकारी है। आँवले को आम की गुठली के साथ पीसकर सिर पर लेप करने से बाल घने एवं लम्बे होते हैं। आँवले का रस मधुमेह में भी लाभकारी है। मधुमेह की पिपासा शान्त करने के लिए ताजा फलों को चूसना उत्तम है। बीजों का फाण्ट भी मधुमेह में दिया जाता है।

गृह उद्यान

थोड़ी सी भूमि भी हमारे स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है। गर्मी या जाड़ा, शहर हो या गाँव आप थोड़े से साधनों से अपने लिये पूरे साल क्लोरोफिल युक्त उपयोगी खाद्य पैदा कर सकते हैं। खिड़की की खाली जगह में गमले एवं छोटी-छोटी क्यारियों में शाक पैदा कर सकते हैं। नगरों में छत के ऊपर गमले आदि में भी मूली, गाजर, खीरा, ककड़ी, पत्ता गोभी, मेथी, भिण्डी, टमाटर, हरे पत्ते वाले शाक आद उगाए जा सकते हैं जिनके उगाने से प्राणिमात्र को अनेक लाभ प्राप्त हो सकते हैं।

अपक्वाहार खाने की कला

इस विज्ञान के युग में पक्वाहार ने ऐसी जड़ जमा ली है कि लोग उसको त्यागने का नाम ही नहीं लेते हैं। यदि आप पक्वाह नहीं छोड़ सकते तो अपने भोजन में प्रतिशत अपक्वाहार लें ताकि आपको प्रकार के खनिज लवण प्राप्त हो सकें।

समाज रोगी क्यों :– रोग का मुख्य कार तली–भुनी चीजों का अधिक प्रयोग कर मेवे के बने पदार्थ, मिठाइयाँ, चाय, कॉ और दुष्पाच्य भोजन का प्रयोग है, पक और तलने से अनेक तत्व नष्ट हो जाते जिससे उसका स्वाद कम हो जाता है औ उसकी पूर्ति कृत्रिम साधनों से पूरी क जाती है जिसके कारण भूख से अधि खाया जाता है जो रोगों का कारण बनता है

इस विज्ञान के युग में अनेक व्यस प्रचलित हैं। मांस, मदिरा, सिगरेट बीड़ी, तम्बाकू, चाय, कॉफी आदि- आदि। अगर आप स्वस्थ जीवन व्यती करना चाहते हों तो अपने जीवन मे अपक्वाहार लाएँ और प्रकृति के नियमों क पालन करें। प्रातः शौच आदि से निवृ होकर योगासन करें।

दादी माँ के नुस्खे

वैद्य बदलूराम रसिक, लखनऊ

सरस्वती – दादी माँ चरण स्पर्श।

दादी माँ – प्रसन्न रहो बेटी, कहो आज कहाँ जा रही हो, तुम्हारा दाहिना गाल सूजा है, बोलने में भी कुछ तकलीफ है मालूम होता है कि तुम्हारी दाढ़ में दर्द है उसके कारण सूजन आ गई है।

सरस्वती – हाँ दादी माँ, ४–५ दिन से पिछली दाढ़ में बड़ा दर्द है हर समय टपकन रहती है मालूम होता है कि दाढ़ भी पक गई है खाने में बड़ी तकलीफ होती है इसी की दवा पूछने आई हूँ बचपन में कई बार दाढ़ सूजी थी पकी थी बड़ा दर्द हुआ था।

दादी माँ – हम समझ गई आपकी तकलीफ, पहले यह बताओ कि तुम्हारी दाढ़ में कभी कीड़ा तो नहीं लगा था और रात को सोते समय दूध पीकर सोती हो तो सोने के पहले कुल्ली करती हो कि नहीं?

सरस्वती – दादी माँ बचपन में दाढ़ में कीड़ा लगा था उसकी वजह से बीच में छेद–सा हो गया है दाढ़ काली पड़ गई है। अब फिर उसी में दर्द हो रहा है। यह भी सही है कि मैं रोज रात को दूध पीकर सो जाती हूँ कुल्ली नहीं करती। दादी दवाई बताओ।

दादी माँ – अच्छा अब दवा सुनो, लौंग १०, अदरक ५ ग्राम, दोनों को कुचल कर चौथाई लीटर पानी में पका लो और उसकी गुनगुनी कुल्ली करो। ऐसा करने से सूजन दूर होगी कीड़े मर जायेंगें, अगर दाढ़ पक गई है तो ३ बार सुबह, शाम तथा रात को कुल्ली करने पर दाढ़ का मवाद भी निकल जायगा। लिख लिया।

सरस्वती – हाँ लिख लिया दादी माँ अब आप मुझे दाँत के तमाम रोगों के लिये अपने अनुभव बताइये।

दादी माँ – अच्छा सुनो, बहुत से बच्चे जो दूध पीकर बिना कुल्ली कराये ही सुला दिये जाते हैं, जो बच्चे मिट्टी खाते हैं, इन दोनों प्रकार के बच्चों के दाँतों में कीड़ा अवश्य लग जाता है और कुछ बच्चों के दाँत टूट–टूट कर गिरने लगते हैं। आजकल ज्यादा टॉफी खाने वाले बच्चों के भी दाँत बहुत खराब हो जाते हैं। इसलिये बच्चों को दूध पिलाने के बाद कुल्ली करायें और खाना खिलाने के बाद भी खूब अच्छी तरह कुल्ली कराकर सुलाना चाहिये। मिट्टी खाने वाले बच्चों को कीड़े की दवा देकर कीड़े निकलने के बाद मिट्टी खाने से रोकना चाहिये। बच्चों को सुबह–शाम रोज मंजन कराना चाहिये, मंजन का योग इस प्रकार है :

खड़िया ५० ग्राम, कपूर २.५ ग्राम, सुहागा चौकिया भुना हुआ ५ ग्राम। तीनों को पीसकर शीशी में भर दें और यही मंजन रोज बच्चों को करायें। लिख लिया बेटी।

सरस्वती – हाँ लिख लिया दादी माँ, अब बड़ों के दाँतों के सम्बन्ध में बताइये।

दादी माँ – सुनो बेटी, जो लोग रोज दातून करते उनके दाँतों में रोग नहीं होता है। दातून में नीम, बबूल तथा लटजीरा की दातून करना चाहिये, नीम की दातून तो सबसे उत्तम है जिनके दाँत हिलने लगें उनको बबूल की दातून करनी चाहिये जिनके दाँत से खून आता हो उन्हें लटजीरा की दातून करनी चाहिये। लिख लिया बेटी।

सरस्वती – हाँ लिख लिया दादी माँ, मगर यह तो बताओ कि पुरुषों या औरतों के दाँतों में कौन–कौन से रोग होते ओर किस कारण से होते हैं?

दादी माँ – अच्छा सुनो बेटी, जिन लोगों के पेट में कोई रोग जैसे कि भूख न लगना, कब्ज़ रहना आदि होता है, भोजन पचता ही नहीं, उनके दाँतों में दर्द, मसूड़ों में सूजन हो जाती है। बहुत लोगों के दाँतों से खूनी–मवाद आता है, मुँह से बदबू आती है ऐसे रोग को पायरिया कहते हैं। यह रोग लटजीरा की डंडी की दातून करने और साथ ही दातून के साथ हरी नीम की पत्ती चबाने से ४–६ महीने में दूर हो जाता है अगर लटजीरा की दातून न मिले तो नीम की पत्ती के साथ नीम की दातून १० मिनट तक रोज ४–६ महीने तक करने से खून और मवाद निकलना, मुँह की बदबू बंद हो जाती है मगर पेट साफ रखने के लिये, छोटी हरड़ १०० ग्राम, नमक २० ग्राम मिलाकर महीन पीसकर रख लें, इसे २–२ चम्मच रोज रात

दादी माँ के नुस्खे

वैद्य बदलूराम रसिक, लखनऊ

सरस्वती – दादी माँ चरण स्पर्श।

दादी माँ – प्रसन्न रहो बेटी, कहो आज कहाँ जा रही हो, तुम्हारा दाहिना गाल सूजा है, बोलने में भी कुछ तकलीफ है मालूम होता है कि तुम्हारी दाढ़ में दर्द है उसके कारण सूजन आ गई है।

सरस्वती – हाँ दादी माँ, ४–५ दिन से पिछली दाढ़ में बड़ा दर्द है हर समय टपकन रहती है मालूम होता है कि दाढ़ भी पक गई है खाने में बड़ी तकलीफ होती है इसी की दवा पूछने आई हूँ बचपन में कई बार दाढ़ सूजी थी पकी थी बड़ा दर्द हुआ था।

दादी माँ – हम समझ गई आपकी तकलीफ, पहले यह बताओ कि तुम्हारी दाढ़ में कभी कीड़ा तो नहीं लगा था और रात को सोते समय दूध पीकर सोती हो तो सोने के पहले कुल्ली करती हो कि नहीं?

सरस्वती – दादी माँ बचपन में दाढ़ में कीड़ा लगा था उसकी वजह से बीच में छेद–सा हो गया है दाढ़ काली पड़ गई है। अब फिर उसी में दर्द हो रहा है। यह भी सही है कि मैं रोज रात को दूध पीकर सो जाती हूँ कुल्ली नहीं करती। दादी दवाई बताओ।

दादी माँ – अच्छा अब दवा सुनो, लौंग १०, अदरक ५ ग्राम, दोनों को कुचल कर चौथाई लीटर पानी में पका लो और उसकी गुनगुनी कुल्ली करो। ऐसा करने से सूजन दूर होगी कीड़े मर जायेंगें, अगर दाढ़ पक गई है तो ३ बार सुबह, शाम तथा रात को कुल्ली करने पर दाढ़ का मवाद भी निकल जायगा। लिख लिया।

सरस्वती – हाँ लिख लिया दादी माँ अब आप मुझे दाँत के तमाम रोगों के लिये अपने अनुभव बताइये।

दादी माँ – अच्छा सुनो, बहुत से बच्चे जो दूध पीकर बिना कुल्ली कराये ही सुला दिये जाते हैं, जो बच्चे मिट्टी खाते हैं, इन दोनों प्रकार के बच्चों के दाँतों में कीड़ा अवश्य लग जाता है और कुछ बच्चों के दाँत टूट–टूट कर गिरने लगते हैं। आजकल ज्यादा टॉफी खाने वाले बच्चों के भी दाँत बहुत खराब हो जाते हैं। इसलिये बच्चों को दूध पिलाने के बाद कुल्ली करायें और खाना खिलाने के बाद भी खूब अच्छी तरह कुल्ली कराकर सुलाना चाहिये। मिट्टी खाने वाले बच्चों को कीड़े की दवा देकर कीड़े निकलने के बाद मिट्टी खाने से रोकना चाहिये। बच्चों को सुबह–शाम रोज मंजन कराना चाहिये, मंजन का योग इस प्रकार है :

खड़िया ५० ग्राम, कपूर २.५ ग्राम, सुहागा चौकिया भुना हुआ ५ ग्राम। तीनों को पीसकर शीशी में भर दें और यही मंजन रोज बच्चों को करायें। लिख लिया बेटी।

सरस्वती – हाँ लिख लिया दादी माँ, अब बड़ों के दाँतों के सम्बन्ध में बताइये।

दादी माँ – सुनो बेटी, जो लोग रोज दातून करते उनके दाँतों में रोग नहीं होता है। दातून में नीम, बबूल तथा लटजीरा की दातून करना चाहिये, नीम की दातून तो सबसे उत्तम है जिनके दाँत हिलने लगें उनको बबूल की दातून करनी चाहिये जिनके दाँत से खून आता हो उन्हें लटजीरा की दातून करनी चाहिये। लिख लिया बेटी।

सरस्वती – हाँ लिख लिया दादी माँ, मगर यह तो बताओ कि पुरुषों या औरतों के दाँतों में कौन–कौन से रोग होते ओर किस कारण से होते हैं?

दादी माँ – अच्छा सुनो बेटी, जिन लोगों के पेट में कोई रोग जैसे कि भूख न लगना, कब्ज़ रहना आदि होता है, भोजन पचता ही नहीं, उनके दाँतों में दर्द, मसूड़ों में सूजन हो जाती है। बहुत लोगों के दाँतों से खूनी–मवाद आता है, मुँह से बदबू आती है ऐसे रोग को पायरिया कहते हैं। यह रोग लटजीरा की डंडी की दातून करने और साथ ही दातून के साथ हरी नीम की पत्ती चबाने से ४–६ महीने में दूर हो जाता है अगर लटजीरा की दातून न मिले तो नीम की पत्ती के साथ नीम की दातून १० मिनट तक रोज ४–६ महीने तक करने से खून और मवाद निकलना, मुँह की बदबू बंद हो जाती है मगर पेट साफ रखने के लिये, छोटी हरड़ १०० ग्राम, नमक २० ग्राम मिलाकर महीन पीसकर रख लें, इसे २–२ चम्मच रोज रात

को सोते समय फाँकने से कब्ज़ दूर हो जाता है भूख लगने लगती है और भोजन भी पचने लगता है यह दोनों कार्य ४-६ महीने तक करने से दाँत निरोग हो जाते हैं। बहुत से लोगों के दाँत चूने वाली तम्बाकू तथा अधिक पान खाने से हिलने लगते हैं ऐसे लोगों को बबूल की दातून को कुचलकर कूची बनाकर नीम की पत्ती के साथ करना चाहिये ३-४ महीने में दाँत का हिलना कम हो जाता है।

बहुत से लोगों के दाँत में पानी लगता है गरम पानी या चाय भी लगती है दाँत दर्द भी करते हैं उनके दाँतों के ऊपर का एक प्रकार का चूना घिस जाता है इसलिये ठंडा या गरम पानी लगता है मीठी चीज भी लगती है। इस प्रकार के सभी दाँतों के रोगियों के लिये एक मंजन है जिसको लगाने से दाँतों के रोग जैसे - दाँत में कीड़ा लगना, मसूड़ों की सूजन, दाँत से खून, मवाद का आना, मुँह में बदबू, ठंडा, गरम पानी लगना, दाँतों का हिलना आदि बंद हो जाता है लिखो बेटी कापी में। हड़ छोटी, बहेड़े का छिलका, आँवला, सोंठ, अकरकरा असली, मांई बड़ी, कुलंजन, जायफल, कड़वी वच, मौलश्री, बबूल की फली, अजवायन, पतंग की लकड़ी, देवदार, लौंग, हल्दी, मेथी, सब औषधियाँ १००-१०० ग्राम, कवाबा (तोंमड़ का बीज १ किलो, सेंधा नमक २०० ग्राम, बबूल की छाल २०० ग्राम, नीम की सूखी पत्ती २०० ग्राम, राई बनारसी २०० ग्राम, गेरू ५०० ग्राम, संगजएहत ५०० ग्राम, फिटकरी ५०० ग्राम, आग में भूनकर डालें)। सब औषधियों को पीसकर छानकर कपूर १०० ग्राम पीसकर मिला लें और इसे बोतल में या डिब्बे में भरकर रख लें। इस मंजन को कम से कम १५-२० मिनट मुँह में पड़ा रहने दें और फिर उंगली से दाँतों पर रगड़कर कुल्ली करें। जो लोग दातून करते हैं वे दातून के साथ मंजन करें तो दाँत के अनेक रोग दूर होते हैं। दाँत साफ रहते हैं और हिलते भी नहीं हैं। जो व्यक्ति मंजन को लेकर दाँतों में इधर-उधर मलकर तुरन्त कुल्ली कर लेते हैं उन्हें मंजन का लाभ नहीं मिलता है इसलिये कम से कम १०-१५ मिनट मंजन को मुँह में रहना ही चाहिये इससे मंजन की औषधियाँ फूलकर दन्त रोगों पर अपना प्रभाव दिखाती हैं। अगर दाँत का रोगी पेट का भी रोगी है तो उसे ऊपर बताई गई औषधि को अवश्य सेवन करना चाहिये। लिख लिया बेटी, अब कापी दे दो इसमें बहुत से योग लिखे हैं।

सरस्वती - दादी माँ, अब हम दाँत के रोग वालों को आपकी बताई हुई बातें बतायेंगे और बच्चों की माताओं को विशेष रूप से बतायेंगे।

नोट : यह देखा गया है कि देहात के लोग जो दातून करते हैं उनके दाँत ८०-९० वर्ष की आयु तक न तो गिरते हैं न ही रोग ग्रस्त होते हैं किन्तु शहर के लोग जो आयुर्वेदिक मंजन लगाते हैं उनके दाँत ठीक रहते हैं और जो टूथपेस्ट ब्रश का उपयोग करते हैं उनके दाँतों में रोग अधिक होता है और ५० वर्ष की आयु में ही हिलने लगते हैं। बच्चे टूथपेस्ट करते समय काफी मात्रा में टूथपेस्ट को निगल जाते हैं इससे उनके पेट में कई प्रकार के रोग हो जाते हैं इसलिये जहाँ तक हो सके दातून या देशी मंजन का उपयोग करना अच्छा रहता है। मेरी आयु ८० वर्ष की है मैं पान बहुत खाता हूँ परन्तु दाँत अभी तक निरोग हैं चने भी चबाता हूँ इसका मूल कारण यह है कि मैं उपरोक्त मंजन नित्य १५ मिनट सवेरे करता हूँ। टूथ ब्रश से मसूड़ों की जड़े कमजोर होती हैं। पायरिया के रोगी को बहुत नुकसान होता है दाँत हिलने लगते हैं इसलिये टूथब्रश नहीं करना चाहिये।

प्रिय पाठक,

"जीवनीय" का प्रकाशन लोक स्वास्थ्य परंपरा संवर्धन समिति (लोस्वापसंस) के सदस्य संगठनों एवं कार्यकर्ताओं के सक्रिय सहयोग द्वारा भारत की लुप्तप्राय होती स्वास्थ्य की बहुमूल्य स्थानिक परंपराओं के विकास के लिये राष्ट्रीय स्तर पर शुरू किए गए आंदोलन का भाग है।

पाठकों से अनुरोध है कि लोस्वापसंस तथा जीवनीय पत्रिका के सक्रिय सदस्य बन कर इस आंदोलन में अपना सहयोग दें तथा अपनी वाटिकाओं में औषधीय पौधे लगाकर व उनका प्रयोग करके स्वास्थ्य के सामान्य विकारों को दूर कर स्वास्थ्य लाभ ले सकें।

- सम्पादक मंडल

आयुर्वेद में दन्तस्वास्थ्य

वैद्य उमेश चन्द्र शर्मा, लखनऊ

आयुर्वेद में दाँत की रचना, उसके कार्य, उसमें होने वाले रोग तथा उनकी चिकित्सा का वर्णन बड़े सुन्दर व वैज्ञानिक ढंग से किया गया है। प्राचीन वैज्ञानिकों ने दाँत को अस्थि का एक प्रकार मानते हुए उसका नाम "रूचक" दिया। दाँतों को रूचक नाम देने के पीछे एक सोच थी। रूचक का अर्थ है – रुचि उत्पन्न करने वाला। भोजन जब दाँतों के द्वारा खूब चबाया जाता है तभी रुचिकर प्रतीत होता है। दाँत को अस्थि का उपधातु (अस्थि के समान गुणधर्म) माना गया है। दाँत, जिस रचना द्वारा मुख में लगे रहते हैं उसे दन्तोदूखल (दंतमूल) कहा गया है। दाँतों में होने वाले प्रमुख ८ रोग हैं तथा दंतमूल में १५ प्रकार के रोग देखने को मिलते हैं। आयुर्वेद के आचार्यों ने दन्त रोग में औषधि व शल्य चिकित्सा, दोनों का ही वर्णन किया है व दाँतों की चिकित्सा में प्रयोग किए जाने वाले शस्त्रों (औजार) का भी नामकरण किया है व उनकी संख्या १२५ के आस–पास बताई है।

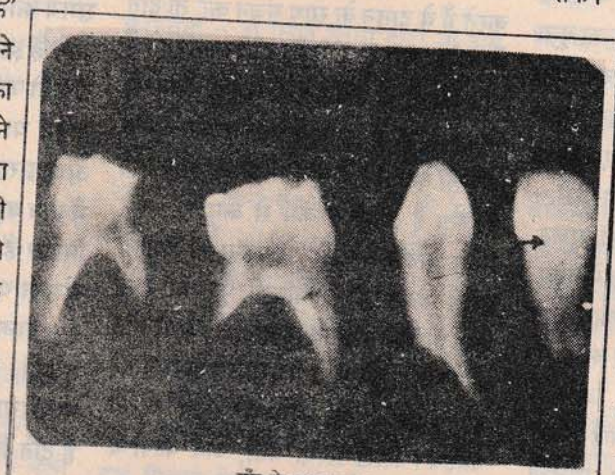

दाँत के चार प्रकार

आयुर्वेद के आचार्यों ने सभी दाँतों की रचना एक समान न मानकर **चार प्रकार** की मानी है यथा – **राजदन्त, वस्त, दंष्ट्र, हानव्य** उपरोक्त चार प्रकार के दाँतों को आधुनिक विज्ञान ने भी स्वीकारा तथा उनके नाम इन्साइजर्स, कैनाइन्स, प्रीमोलर व मोलर नाम दिये। जैसा चित्र में दर्शाया गया है। राजदन्त संख्या में २, तथा बीच में स्थित होते हैं व वस्त, दंष्ट्र तथा हानव्य प्रत्येक की संख्या ६ होती है। ये ऊपर तथा नीचे के दोनों जबड़ों में स्थित होते हैं।

कभी–कभी व्यस्कों मे भी दोहरे अर्थात् दो दाँतों के बीच में भी दाँत निकलते हैं। जब इनमें से कर्मिएक दाँत गिर जाता है तो निकल रहा दाँत उस स्थान पर आ जाता है। जैसा चित्र में दिखाया गया है।

स्वस्थ दाँतों के लक्षण – ठोस, सफेद, आगे की ओर नुकीले, चिकने, गोलाकार, साफ, पूर्णतः विकसित, आपस में एक–दूसरे से मिले हुए। मसूड़ों का रंग गुलाबी होता है।

दाँतों के कार्य

– चेहरे को सही व सुन्दर आकृति प्रदान करना,

– आवाज (बोलने की प्रक्रिया) में सहायता प्रदान करना,

– भोजन को मुलायम बनाना, ताकि आसानी से पाचक रसों द्वारा उसका पाचन हो सके।

आदर्श दन्त चिकित्सक के गुण

– सन्देह रहित शास्त्र का ज्ञान

– जिसने चिकित्सा कार्य को अनेक बार देखा व किया है

– जो मन, वचन, कर्म तथा शरीर से पवित्र है

– सभी चिकित्सा प्रयोगी साधन से सम्पन्न

– सभी इन्द्रियों से पूर्ण

– रोगी की प्रकृति (मिजाज) समझने वाला, और

– जिसमें हमेशा कुछ जानने, खोजने पढ़ने की क्षमता हो, अपने शास्त्र के अलावा दूसरे शास्त्र को जानने की इच्छा हो।

दाँत की देखभाल

सम्भवतः आदिमानव अपने दाँतों की सफाई नहीं करता था क्योंकि उस युग में उसका भोजन काफी कड़ा तथा रेशेदार होता था जिसके कारण स्वभावतः दाँत की सफाई हो जाती थी। जैसे–जैसे सभ्यता का विकास हुआ, मानव ने भोजन पकाकर खाना प्रारम्भ किया, जिस कारण दाँतों का काम (चबाना)

धीरे–धीरे कम होता गया। पके हुए भोजन के कण दाँतों के बीच फंस जाते है जिसके कारण जीवाणु पनपने लगते हैं। अतः दाँतों की सफाई आज आवश्यक है। दिन में कम से कम दो बार (सुबह व सोते समय) दाँत अवश्य साफ करने चाहिये।

आज नगरवासी लोग ब्रश का उपयोग करने लगे हैं जबकि गाँवों में दातून का प्रयोग करते हैं। दातून द्वारा दाँत के रोग कम होते हैं क्योंकि एक तो दातून में औषधीय गुण होते हैं तथा दूसरा प्रमुख गुण है कि दातून हमेशा ताजा प्रयोग की जाती है जिसमें संक्रमण की सम्भावना नहीं रहती। दातून को प्रयोग करने के बाद फेंक देते हैं। ब्रश को लोग अच्छी तरह से साफ करके नहीं रखते, बहुतों को तो ब्रश करने के सही तरीके का ज्ञान भी नही होता जिसके कारण संक्रमण की संभावना रहती है।

दातून करने से लाभ

प्रतिदिन दातून करने से मुख की दुर्गन्धि

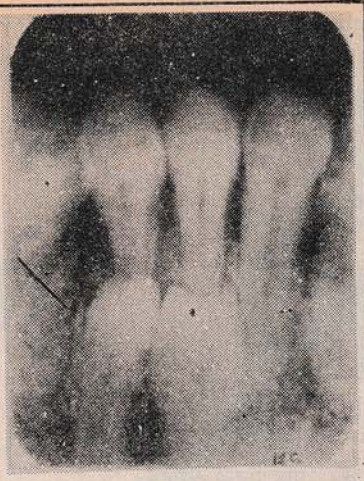

वयस्कों में भी दोहरे दाँत

दूर होती है तथा जीभ, दाँत व मुख निर्मल हो जाते हैं, जिससे भोजन के प्रति रुचि बढ़ जाती है।

दातून का चुनाव : कषाय, कटु व तिक्त रस (स्वाद) वाली वृक्षों की पतली शाखा के अगले भाग को लें। दातून कनिष्ठिका अंगुली के समान मोटी, सीधी व बिना गाँठ वाली होनी चाहिये तथा अच्छी भूमि पर उगे हुए वृक्ष से ली गई हो।

वृक्ष नाम	रस
नीम	तिक्त
खदिर और मौलसिरी	कषाय
करंज	कटु

दातून के अगले भाग को चबा–चबा कर कूची बनाकर प्रयोग करना चाहिये।

दाँत के लिए तिक्त रस क्यों लाभदायक है?

तिक्त रस, अरुचि नाशक (भूख लाने वाला), विष को दूर करनेवाला, कृमियों को मारनेवाला, मांस को मजबूत बनानेवाला, मवाद, पित्त व कफ दोष को सुखानेवाला होता है। तिक्त रस का सीमित मात्रा में प्रयोग लाभदायक है एवं अधिक प्रयोग हानिकर है। नीम में तिक्त रस रहता है जिस कारण नीम की दातून दाँतों के लिए लाभदायक है।

शेष पृष्ठ ४८ पर

दन्त–विज्ञान का इतिहास

भारत के धार्मिक ग्रन्थ "महाभारत" में इस बात की जानकारी देखने को मिलती है कि महाराजा कर्ण का एक दाँत सोने का था। प्राचीन समय में नालन्दा व काशी में दाँत सम्बन्धित अध्ययन की व्यवस्था थी। जिस प्रकार आधुनिक ढंग से दाँत निकालते समय किसी औषधि द्वारा उस स्थान को बेजान (सुन्न) कर दिया जाता है उसी प्रकार प्राचीन समय में सम्मोहिनी द्वारा उस जगह को सुन्न कर दाँत निकालने की व्यवस्था थी। आयुर्वेद चिकित्सा के शल्य चिकित्सक ने तो दाँत रोगों का वर्णन करते हुए विस्तार से शल्यकर्म का वर्णन किया है तथा उन्होंने जिन शस्त्रों का प्रयोग उस समय किया, उन्हीं शस्त्रों को थोड़ा विकसित करके आज आधुनिक युग में प्रयोग किया जा रहा है। प्राचीन समय में मृत व्यक्तियों के दाँत निकालकर, आवश्यकता पड़ने पर उनको जीवित व्यक्तियों में लगाया जाता था। अंग्रेज़ी शासन में खुदाई के दौरान हजारों वर्ष पूर्व के हड्डियों के पिन्जर से, किसी धनवान स्त्री (सम्भवतः कोई महारानी) को लगाया गया कृत्रिम दाँतों का पूरा सैट मिला था, जो आज भी मेडिकल–सर्जिकल सोसाएटी ऑफ एडिनबरा, ब्रिटेन के संग्रहालय में सुरक्षित है। कृत्रिम दाँतों का यह सैट जिस तरीके से तैयार किया एवं लगाया गया था, उससे यह बात प्रमाणित होती है कि प्राचीन भारत में कृत्रिम दाँत बनाकर लगाने का रिवाज़ था। ये कृत्रिम दाँत शंख, सीप एवं भिन्न प्रकार के पत्थरों द्वारा बनाए जाते थे। बौद्ध काल में दन्त–विज्ञान के विकास को सही रूप नहीं मिल पाया क्योंकि शल्य चिकित्सक को सम्मान से नहीं देखा जाता था। मुगल–साम्राज्य में केवल शाही–परिवारों तक की दन्त–चिकित्सा सीमित रही, बाद में अंग्रेज़ों ने इसमें काफी परिवर्तन किया, तब से भारत में आधुनिक दन्त–विज्ञान का प्रचलन हुआ।

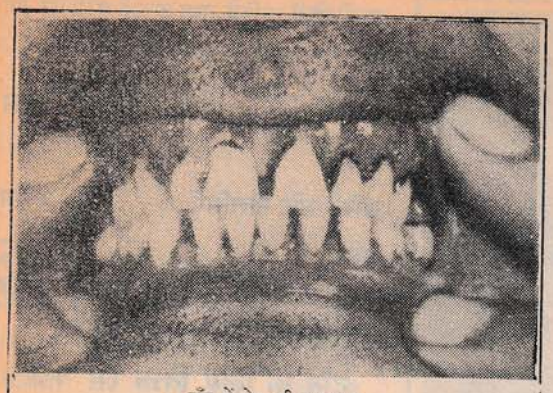

दाँत में रोग की शुरुआत

दंत रोगों की रोकथाम

डॉ. सी.एस. सैम्बी, लखनऊ

प्रतिदिन कम से कम दो बार सुबह सोकर उठने पर तथा रात को सोने से पहले दाँत जरूर साफ करना चाहिए। दाँत साफ करने के लिए दातून/ब्रश अथवा उंगली का प्रयोग करना चाहिये। ब्रश प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उसके किनारे मुड़े हुए न हों, क्योंकि इस प्रकार का ब्रश प्रयोग करने से दाँतों व मसूड़ों को नुकसान पहुँचता है। ब्रश को अच्छी तरह से धोकर रखना चाहिए नहीं तो उसमें संक्रमण लगा रह जाता है।

- यदि आप दाँत की सफाई के लिए ब्रश का प्रयोग करते हैं तो इसमें सावधानी बरतें। जैसे – बच्चों के लिए सॉफ्ट (कोमल) तथा बड़ों के लिए मीडियम ब्रश लाभकारी हैं। ब्रश को प्रयोग करने के बाद साफ पानी द्वारा धोकर उसे "ब्रश–केस" में ही रखें। किसी दूसरे व्यक्ति का ब्रश कभी प्रयोग न करें।
- ब्रश का प्रयोग धीरे–धीरे करें ताकि मसूड़ों पर रगड़ न लगे। यह सावधनियाँ लेना आवश्यक है।
- दिन में जब भी कोई खाद्य–पदार्थ सेवन करें, उसके बाद दाँतों को साफ पानी द्वारा अच्छी तरह से साफ करें। दाँतों को उंगली द्वारा रगड़ कर साफ करना चाहिये।

यदि किसी गरम पदार्थ का सेवन किया है तो हल्के गुनगुने पानी से दाँत धोएँ, ठंडे पानी से नहीं साफ करना चाहिए। इसी तरह ठंडे पदार्थ के लिए भी ध्यान रखें, ठंडी चीज खाने के तुरन्त बाद गर्म वस्तु न लें।

- ब्रश करने के कुछ नियम होते हैं उनका पालन करना चाहिए जैसे – ब्रश कभी जोर–जोर से नहीं करना चाहिए वरना ब्रश से दाँतों की सतह घिस जाती है। ब्रश हमेशा ऊपर से नीचे व नीचे से ऊपर की ओर घुमाएँ, ऐसा ही दाँतों के पीछे भी करें। कभी ब्रश को रगड़ें नहीं।
- खाना खाने के बाद कुल्ला द्वारा दाँतों व मुख को अच्छी तरह धोना चाहिए ताकि दाँतों के बीच जमा खाद्य–पदार्थ निकल जाए।
- दाँतों को पिन इत्यादि से कुरेदना नहीं चाहिए।

दाँतों को स्वस्थ व आकर्षक बनायें

हर व्यक्ति चाहता है कि उसके दाँत स्वस्थ व आकर्षक दिखायी दें जो कि मन को लुभाने वाली मुस्कुराहट में सहायक होते हैं। इसके लिए कुछ उपाय हैं–

– सर्वोत्तम व सस्ता उपाय है नीम का दातुन जो कि मजबूती और चमक प्रदान करता है।

– दिन में कम से कम दो बार दाँत साफ करने चाहिएँ।

– सुबह उठते ही चाय (बेड–टी) के रिवाज़ से बचना आवश्यक है।

– अधिक गर्म या ठंडी वस्तुएँ नहीं खानी चाहिएँ। इससे पायरिया होने की सम्भावना होती है।

– दाँतों को लोहे की पिन या सलाई से नहीं कुरेदना चाहिए।

– अधिक पान खाने या धूम्रपान से दाँत मटमैले हो जाते हैं।

– फलों को बिना चाकू से काटे खाने से भी दाँत सुन्दर व मजबूत होते हैं।

– कच्ची सब्ज़ी भी दाँतों के लिए उत्तम है।

– दाँतों को कभी–कभी मजबूती से भींचना भी लाभदायक है।

● जब कभी दाँतों में पानी या मीठा लगने लगे या मसूड़ों से खून या मवाद आने लगे या दाँत में दर्द होने लगे तो दन्त चिकित्सक से सम्पर्क करें।

● दाँतों को हमेशा चमकीला व स्वस्थ बनाए रखने के लिए सुपारी, पान, पान- मसाला, तम्बाकू व धूम्रपान का सेवन न करें। ये सब चीजे मुख में कैंसर पैदा करती हैं।

● यदि दाँतों पर कोई धब्बा, मैल या हल्के पीले रंग की परत जमी हुई हो तो दन्त चिकित्सक से सम्पर्क करें।

● बच्चों को अंगूठा चूसने की आदत से रोकें, इस आदत से दाँत आगे की ओर निकल आते हैं।

● यदि कोई दाँत निकाला गया है तो उसकी जगह दूसरा दाँत लगवा लेना चाहिए वरना अगल-बगल वाले अन्य दाँत भी हिल जाते हैं।

● बच्चों को चॉकलेट, टॉफी ज्यादा नहीं खाना चाहिए क्योंकि यह सब दाँत की जड़ में जम जाते हैं जिनसे बाद में दाँत में कीड़े लग जाते हैं।

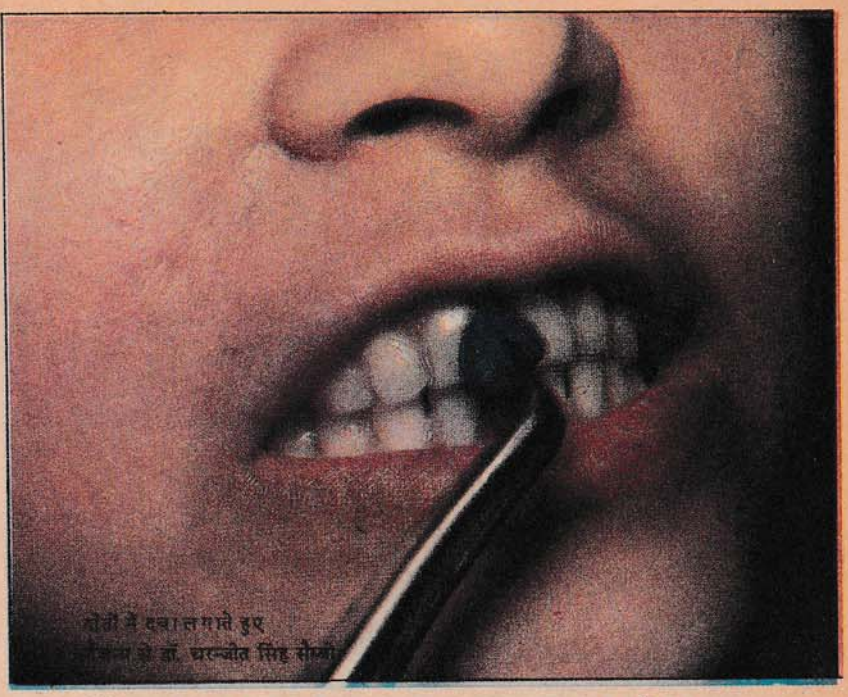

दाँतों में दवा लगाते हुए [illegible] डॉ. चरन्जीत सिंह [illegible]

● यदि सम्भव हो तो दाँत शीशे के सामने खड़े होकर साफ करें, इससे दाँत की सफाई का पता चल जाता है।

● दाँतों को स्वस्थ बनाए रखने के लिए अमरूद, सेब, मूली, शकरकन्द, गन्ना, गाजर आदि में से किसी एक या दो का सेवन प्रतिदिन अवश्य करें। इससे दाँतों का व्यायाम अच्छी तरह से हो जाता है।

● ज्यादा ठंडे व ज्यादा गर्म खाद्य- पदार्थ भी दाँत के लिए हानिकारक हैं।

दन्त रोग

राष्ट्रीय एवं विश्व स्वास्थ्य कार्यक्रम में मुख के स्वास्थ्य को प्राप्त करना एक मुख्य लक्ष्य माना गया है और इसको ईस्वी सन् २००० तक प्राप्त करना आवश्यक माना गया है। सामान्यतः किसी न किसी मुख रोग से पीड़ित होनेवालों की संख्या भारत में ८० प्रतिशत है इससे कुछ कम प्रतिशत विदेशों में है परन्तु बड़े महानगरों में इसकी संख्या ८० प्रतिशत से भी अधिक है।

दन्त मन्जन के कुछ यूनानी योग

हकीम सैय्यद औसाफ हुसैन रिज़वी, लखनऊ

● *कीकर की लकड़ी का कोयला ५० ग्राम, भुनी हुई फिटकरी २० ग्राम, सेंधा नमक १० ग्राम। सभी को बारीक पीस लें और अच्छी तरह छान कर रखें। सवेरे-शाम दाँतों पर मलें, इससे दाँत उजले और चमकदार हो जायेंगे।*

● *सीप को जलाकर उसमें थोड़ा सा नमक मिलाकर बारीक पीस लें और अच्छी तरह छान कर रखें तथा प्रतिदिन दाँतों पर मलें। इससे दाँतों का मैल दूर हो जाएगा।*

● *माजू २० ग्राम, फिटकरी ५० ग्राम। दोनों को बारीक पीस-छान कर प्रतिदिन प्रातः दाँतों पर मलें और आधे घण्टे बाद दाँतों को अच्छी तरह धो डालें। इससे दाँत मजबूत होंगे और खून भी बन्द हो जाएगा।*

● *जामुन की लकड़ी का कोयला ५० ग्राम, फिटकरी ५० ग्राम। दोनों को बारीक पीसकर, छानकर रखें और प्रतिदिन दाँतों पर मलें। इससे दाँत मजबूत होंगे और अगर उनसे खून आता होगा तो वह भी रुक जायगा।*

पुरानी मदिरा, बोतल नई

नीम

आधुनिक वैज्ञानिक कसौटी पर

डॉ. चरनजीत सिंह सैम्बी, डॉ गोपाल मिश्र एवं डॉ एस.के. निगम, लखनऊ

हमारी भारतीय संस्कृति में वनों की महत्वपूर्ण परम्पराएँ रही हैं। अरण्य संस्कृति के अन्तर्गत ज्ञान के केन्द्र रहे हैं, हमारे वन। वनस्पतियों ने जीवधारियों को ऑक्सीजन देकर जीने का आधार प्रदान किया है।

आयुर्वेद ग्रन्थों में नीम का पेड़ विशेष महत्वपूर्ण बतलाया गया है। निम्न नियमन, नेता, पिचुमन्द, तिक्तक, सुतिक्तक आदि नीम के पर्याय हैं। नीम के कोमल पत्ते, निम्ब पत्र–शलाका, निम्ब पुष्प, निम्ब फल, पके निम्ब फल, निम्ब फल की गूदी और निम्ब फल–तेल आदि को विभिन्न रोगों में लाभप्रद बताया गया है। गाँव के बड़े–बूढ़ों द्वारा दाँतों और मसूड़ों के लिए नीम को अच्छा बताया जाना शास्त्र–सम्मत है। ऐसा **सुश्रुत संहिता** में भी देखने को मिलता है–

"पटोल त्रिफला निम्नकषायश्चात्र धावने।।"

(अध्याय २२।५५)

अर्थात् अधिमांश को काटने के उपरांत व्रण धोने, कुल्ला करने के लिए परवल की पत्ती, त्रिफला और नीम का क्वाथ उत्तम होता है। एक अन्य जगह पर नीम के गुणों का वर्णन है–

"कषायं मधुरं तिक्तं कटुकं प्रोत्रुतथितः।
निम्बश्च तिक्तके श्रेष्ठः कषाये खदिरस्तथा।।"

(अध्याय २४।६)

अर्थात् कषाय, मधुर, तिक्त, कटु रस वाले दातून का प्रयोग करना चाहिये। तिक्त रस वाले द्रव्यों में नीम और कषाय रस वाले द्रव्यों में "खैर" (खदिर) श्रेष्ठ हैं।

हमारे शास्त्रों में नीम जैसी सर्वसुलभ कुदरती दवा के उपयुक्त गुण उल्लिखित हैं और परम्परागत रूप से भी इसके लाभ ज्ञात हैं फिर भी इसके गुणों की वैज्ञानिक विवेचना के अभाव में सामान्य–जनों को इसका सही ज्ञान नहीं है। दिन–प्रतिदिन लोगों में डेन्टल पाउडरों और टूथपेस्टों के प्रति बढ़ते लगाव का यह एक प्रमुख कारण है। इस प्रस्तुत लेख के अन्तर्गत वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा नीम की दातून और दाँत साफ करने के लिए उपयोग की जा रही आधुनिक आयुर्वेदिक और व्यवसायिक दन्त मंजनों के "पायरिया रोग" में लाभप्रद होने की क्षमता की तुलनात्मक विवेचना की गई है। इससे यह सिद्ध होता है कि नीम की दातून पायरिया रोग में परम लाभकारी है।

आधुनिक युग में पायरिया रोग पर काफी शोध कार्य हुआ है। जिससे यह ज्ञात हुआ कि पायरिया एक प्रकार की सफेद पर्त से होता है। जिसको कि वैज्ञानिक भाषा में प्लाक कहा जाता है। प्लाक का यह भयंकर रूप उसमें निहित जीवाणुओं के कारण

पान खाने से घिसे दाँत

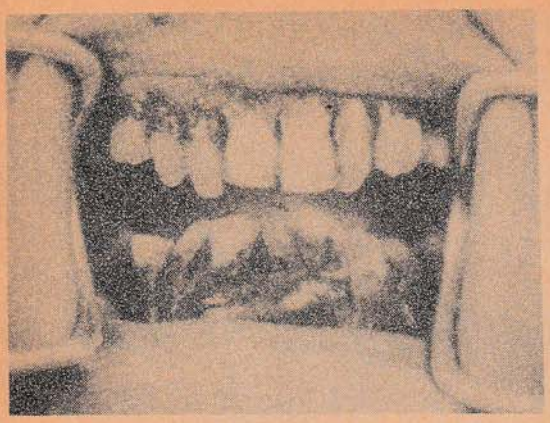

रोग ग्रस्त दाँत

होता है। यह जीवाणु लगातार ज़हरीले पदार्थ निकालते रहते हैं। इन ज़हरीले तत्वों से सबसे पहले इस अवस्था के रोग को "जिनजीवाइटिस" कहते हैं। इसके पश्चात् यह पदार्थ दाँतों को सहारा देने वाली हड्डी को खराब करना शुरू करता है। इसको "पेरियोडान्टाइटिस" (पायरिया) कहते हैं।

अतः प्लाक का दाँतों के ऊपर से हटाया जाना अति आवश्यक है जिसके लिए वैदिक काल से ही प्रयत्न चल रहा है। वैदिक काल में इस रोग पर पूर्ण रूप से विजय पाये जाने के कोई पुष्ट प्रमाण नहीं पाये जाते हैं। फिर भी उस समय जिसमें कि विभिन्न प्रकार की दातूनों का बहुत योगदान था। इन दातूनों से निकले हुए तत्वों से ही प्लाक को रोका जाता था। आधुनिक युग में शोध कार्यों से यह ज्ञात हुआ है कि नीम का अर्क मसूड़ों की सूजन और पायरिया को रोकने में मदद करता है। आधुनिक युग में प्लाक को हटाने के लिए विभिन्न प्रकार के ब्रश तथा कुछ रासायनिक पदार्थों का प्रयोग किया गया है।

एन्टीबायटिक, एन्टीबैक्टीरियल, इन्जाइम, यूरिया, फ्लोराइड इत्यादि। इन रासायनिक पदार्थों में कोई भी ऐसा नहीं है जो कि अवगुणों से रहित हो। अतएव यह उचित समझा गया कि आयुर्वेद द्वारा प्रयोग में लाने वाले पदार्थों तथा नीम के अर्क का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाय। इन्हीं सन्दर्भों में शोध कार्य की दिशा में उन्मुख हुआ गया।

औषधि प्रयोग

इस शोध कार्य के लिए बारह विद्यार्थियों का चयन किया गया जिनकी उम्र १९ वर्ष से २४ वर्ष के बीच थी और मसूड़े बिल्कुल स्वस्थ अवस्था में थे। इन १२ विद्यार्थियों को दो ग्रुपों में विभाजित किया गया। "क" ग्रुप के छात्रों को डाई–इथाईलीन ट्राई–अमीनों पेन्टो एसिटिक एसिड (डी.टी.पी.ए.), सोडियम-डाँडीसाइल-सल्फेट (एस.डी.एस.), इथाईलीन-डाई- अमीन-टेट्राएसिटिक एसिड (ई.टी.डी. ए.) और पलैसिबो आदि का परीक्षण किया गया।

ग्रुप "ख" के छात्रों को नीम की पत्ती के अर्क के ०.५ प्रतिशत, १ प्रतिशत, ८ प्रतिशत घोल तथा दो आयुर्वेदिक दंत मंजन "अ" दंत मंजन और "ब" तथा व्यवसायिक दंत क्रीम इत्यादि प्लाक हटाने के लिए दिये गये।

यह शोध कार्य शुरू करने से पहले नीम का अर्क, प्रोपाइलीन, ग्लाईकोल में घोल दिया गया तथा तैयार किये गये घोल को जाँचकर्ताओं ने विद्यार्थियों के दाँतों पर स्वयं रुई के द्वारा दो बार लगाया। व्यवसायिक दंत क्रीम को उसी प्रकार से प्रयोग में लाया गया जिस प्रकार से उपलब्ध थी तथा उसी प्रकार प्रयोग किया गया। परन्तु आयुर्वेदिक मंजनों को प्रयोग करने से पहले पानी मिलाकर गाढ़ा घोल बना लिया जिसको कि चार–चार विद्यार्थियों को दिया गया जिसे उन्होंने अपनी उंगली से दाँतों पर स्वयं लगाया। रासायनिक पदार्थों तथा आयुर्वेदिक मंजन व नीम के अर्क का प्रयोग शुरू करने से पहले प्रत्येक विद्यार्थी के दाँतों की सफाई करके उनको यह निर्देश दिया गया कि आप तीन दिन तक अपने दाँतों को किसी भी प्रकार से साफ नहीं करेंगे तथा साथ में यह भी कहा गया कि कोई ऐसा खाद्य पदार्थ भी नहीं खायेंगे जिससे कि दाँतों पर से प्लाक हटे। इस तरह तीन दिन बाद जो प्लाक दाँतों पर जमा पाया गया उसको 'विसमार्क ब्राउन डाई' के द्वारा रंगने के बाद 'कुंगली' और 'हीन' विधि द्वारा प्लाक की मात्रा नाप ली गयी। इस प्रकार से प्लाक को प्रयोगात्मक प्लाक कहा गया। इसके उपरान्त प्रत्येक विद्यार्थी के ऊपर तीन दिन तक किसी प्रकार का भी प्रयोग नहीं किया गया तथा उनको ब्रश के द्वारा दाँत साफ करने की भी सलाह दी गई। इस प्रकार तीन दिन विश्राम के बाद चौथे दिन विद्यार्थियों के दाँतों पर से भली प्रकार प्लाक हटाकर उनके मुख को प्लाक रहित कर दिया गया। जिसको कि उपरोक्त विधि के द्वारा दिन में दो बार तीन दिन तक उन्होंने प्रयोग में लाया। इसके उपरान्त चौथे दिन उपरोक्त विधि के अनुसार प्लाक की नाप कर ली गयी तथा उनको फिर तीन दिन के विश्राम के लिए कहा गया और उसके बाद दूसरे प्रयोगात्मक पदार्थ की परीक्षा उपरोक्त तरीकों के अनुसार की। इस प्रकार तीसरे और चौथे पदार्थों का भी निरीक्षण किया गया।

परिणाम

ग्रुप "क" के रासायनिक पदार्थों में एस.डी.एस. सबसे अधिक प्रभावशाली पाया गया। इसके बाद डी.टी.पी.ए., ई.डी.टी.ए. तथा यूरिया का नम्बर है। ग्रुप "ख" के पदार्थों में १% नीम का अर्क प्लाक हटाने के लिए अत्याधिक शक्तिशाली पाया गया जो कि ग्रुप "क" के रासायनिक पदार्थों से भी अधिक शक्तिशाली है। ८% नीम के अर्क की क्षमता १% वाले अर्क से अधिक अच्छी नहीं पायी गयी। अतः यह स्पष्ट होता है कि नीम का अर्क जो कि कम मात्रा में है वह प्लाक को अधिक सूक्ष्मता से हटा सकता है।

रासायनिक पदार्थों की प्लाक हटाने की क्षमता का क्रम निम्न हैं :-

१% नीम का अर्क (७१.४%), ०.५% नीम का अर्क (६९.६१%)ए०.५% नीम का अर्क (५४.९%), ३% एस.डी.एस. (५२.७%), १०% डी.टी.पी.ए. (४५.९%), (अ) आयुर्वेदिक दंत मंजन (४३.०%), ६% ई.डी.टी.ए. (४०.०%), आयुर्वेदिक दंत मंजन (ब) (३७.५%), १०% यूरिया (३४.८%) व्यवसायिक दंत क्रीम (२९.८%)। कोष्ठक में दी गयी संख्या प्लाक हटाने का प्रतिशत दर्शाती है।

आयुर्वेदिक दंत मंजन, "अ" और "ब" दोनों ही व्यवसायिक दंत क्रीम से अधिक प्रभावशाली पाये गये। इस शोध से इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया कि आयुर्वेद में जो अन्य जड़ी-बूटियाँ दंत रोगों के उपचार के लिए प्रयोग में लायी जाती हैं उनका वैज्ञानिक विधि से विश्लेषण करने की अति आवश्यकता है। जिससे कि पायरिया की रोकथाम के लिए ये वैज्ञानिक विश्लेषण एक नया अध्याय खोल सके। नीम की महत्ता चिकित्सा विज्ञान के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण सिद्ध होती है। जब हम इस शोध कार्य के सभी प्रयोगात्मक पदार्थों की तुलना करते हैं तो यह देखने में आता है कि नीम के तीनों अर्क प्लाक हटाने में सबसे ज्यादा शक्तिशाली हैं। हम कह सकते हैं कि नीम के अन्य प्रकारों को जैसे कि नीम का तेल आदि पर और अधिक वैज्ञानिक प्रयोग करके इसको प्रतिदिन दाँत साफ करने के लिए प्रयोग में ला सकते हैं।

दातून वृक्ष

पीलू

हकीम गयासुद्दीन नदवी, लखनऊ

पीलू एक अत्यन्त लाभकारी औषधीय वृक्ष है। दाँतों की रक्षा में इसका विशेष महत्व है। यह एक टेढ़ा–मेढ़ा वृक्ष है जिसकी दुर्बल शाखाएँ नीचे झुकी होती हैं। यह वृक्ष हमारे देश में काफी मात्रा में पाया जाता है। उत्तर प्रदेश में इटावा के आस–पास, पश्चिमी बिहार, दक्षिणी पंजाब, गुजरात, कच्छ काठियावाड़, राजस्थान, सिन्ध, बलूचिस्तान आदि सूखे तथा गर्म प्रदेशों में यह अधिक पैदा होता है। अरब देशों में भी यह काफी मात्रा में होता है। वहाँ के लोग इसको मिस्वाक (दातून) के रूप में अत्यधिक प्रयोग करते हैं। कुछ अरब तो इसकी पतली सी शाखा को हर समय ही मुँह में दबाए दिखाई देते हैं। इस्लामी धर्म–ग्रन्थों में इसका वर्णन सर्वोच्च दातून के रूप में किया गया है। इसी कारण सारे विश्व के मुसलमान दातून के रूप में इसको प्राथमिकता देते हैं। भारतवर्ष में इसकी दो जातियाँ मिलती हैं– (१) छोटा पीलू, (२) बड़ा पीलू।

भाषावार नाम : छोटा पीलू : हिन्दी – छोटा पीलू, पिलुआ; उर्दू – पीलू; संस्कृत – पीलुः, गुड़फल, लघुपीलु; यूनानी – अराक; अरबी – अराक, बरबर; फारसी – दरख्ते मिस्वाक, दरख्ते शोरा; पंजाबी – पीलू, वण जाल; मराठी – पीलु; गुजराती – खारी जाल; लैटिन – *साल्वाडोरा पर्सिका* ।

बड़ा पीलू :– हिन्दी – बड़ा पीलू; संस्कृत – बृहद पीलु, महा पीलु; गुजराती – मोठीजाल; लैटिन – *साल्वाडोरा ओलिआॅइड्स* ।

औषधि के रूप में इस वृक्ष के पत्र, पुष्प, मूल, काष्ठ, बीज आदि का प्रयोग होता है। इसका फल एक बीजवाला होता है जो गुच्छों में निकलता है। ये फल पकने पर कालापन लिये हुए लाल रंग के होते हें। इनका स्वाद मीठा/चरपरा होता है। स्थानीय लोग इनको खाते हैं। इनके बीज से एक तेल निकलता है जिसको ईथरियल ऑयल कहते हैं।

दातून के रूप में इस वृक्ष की शाखाओं का विश्वव्यापी प्रयोग होता है। सारे विश्व के मुसलमान प्रतिवर्ष हज के अवसर पर मक्का एवं मदीना के पवित्र नगरों में यह दातून भारी मात्रा में खरीदते हैं तथा स्वदेश लौट कर मित्रों एवं सम्बन्धियों को भेंट करते हैं। भारत के स्थानीय बाजारों में भी यह दातून उपलब्ध है। इस दातून की एक विशेषता यह भी है कि इसके रेशे काफी मुलायम और मजबूत होते हैं। एक बार कूची बनाकर यदि सफाई एवं सावधानी से इसे रखा जाए तो यह कई दिनों तक चलती है इस प्रकार एक ही दातून काफी समय तक काम करती है।

इमाम अबू हनीफा का कथन है कि पीलू दातून के रूप में प्रयोग की जाने वाली सर्वोच्च वस्तु है। इससे आवाज़ खुल जाती है, जबान की हकलाहट दूर होती है, मुख से सुगन्ध आती है, मस्तिष्क शुद्ध होता है तथा भूख बढ़ जाती है। उनका यह भी कथन है कि यदि इसको गुलाबजल में भिगोकर प्रयोग किया जाए तो अधिक लाभकारी है।

इब्ने अब्बास का कथन है कि यह मुख को शुद्ध करता है, मसूड़ों को मजबूत बनाता है, कफ शामक है, घाव भरता है, पक्वाशय को खोलता है।

दातून के अतिरिक्त इस वृक्ष के विभिन्न अंगों का प्रयोग औषधि के रूप में अतिसार, गर्भाशय शोथ, बवासीर आदि रोगों में विभिन्न प्रकार से किया जाता है। खुजली एवं चर्म रोगों में भी यह लाभदायक है।

हमारी फाइल से

बच्चों में दांत निकलने की शिकायतें और घरेलू इलाज

वैद्य उषा पंडितराव देशमुख, नागपुर

दांत निकलने की प्रक्रिया से लेकर उनकी देखभाल और बीमारी की अवस्था में सरल उपचार तक सभी बातों का विस्तार से वर्णन आयुर्वेद की संहिताओं में मिलता है। प्रस्तुत लेख में बच्चों के दांत निकलने की प्रक्रिया और उसकी देखभाल का सरल, सुबोध वर्णन है।

"अंजू दीदी, शेखर एक साल का हो गया, लेकिन उसके दांत अभी तक नहीं निकले। मुझे बड़ी फिकर हो रही है।"

"सुनीता", इसमें घबराने की क्या बात है ? मैं तुझे दंतोद्भेदन यानी दांत निकलने के बारे में अभी विस्तार से बता कर तेरी चिंता दूर किये देती हूं"।

"दांतों का बनना एक धीमी किंतु लगातार चलने वाली प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया गर्भावस्था के चौथे महीने में शुरू होती है। उस समय से भ्रूण (गर्भ में पल रहे शिशु) के मसूढ़ों में दांत दंतांकुरों के रूप में अंकुरित होने लगते हैं और यह प्रक्रिया बच्चे के वयस्क होने तक (17 से 21 वर्ष की वय तक) चलती है।

दंतोद्भेदन की तीन अवस्थाएं हैं, दंतांकुरों का बनना, दांतों का बनना और दांत निकलना। बच्चे के मसूढ़ों में दंताकुरों का बनना गर्भावस्था की घटना है। मसूढ़ों के अंदर ही दंतांकुरों का बढ़कर दांतों का रूप धारण करना दूसरी अवस्था है और मसूढ़ों को फाड़कर दांतों का बाहर निकल आना तीसरी अवस्था है जो दंतोद्भेदन कहलाता है।

"और यह भी ध्यान रखने की बात है कि जितने महीने में दंतांकुर बनते हैं उतने ही दिनों में वे मसूढ़ों को फाड़कर बाहर निकलते हैं। उदाहरण के लिए यदि दंतांकुर सातवें महीने में बने तो वे बच्चे के जन्म के बाद यथासमय सात दिन में फूटकर बाहर निकलते हैं और जन्म के जितने महीने बाद दूध के दांत निकलते हैं उतने ही वर्षों में वे गिर जाते हैं और फिर नये दांत आते हैं। यदि दूध के दांत सातवें महीने में निकले हैं तो वे सातवे वर्ष में गिर जायेंगे और स्थायी दांत उनका स्थान ले लेंगे।"

दांत दो प्रकार के होते हैं। एक तो दूध के दांत और दूसरे स्थायी दांत। दूध के दांत बालक के जन्म के बाद प्रायः पांचवें महीने से दसवें महीने के बीच निकलना प्रारंभ करते हैं। बच्चे के ढाई वर्ष के होने तक प्रायः सभी दांत निकल आते है।

बीच के नीचे के दांत बच्चे के पांचवें महीने से दसवें महीने के बीच ऊपर के बीच के आठवें से दसवें महीने के बीच, नीचे के पार्श्व के 12 वें महीने से 14 वें के बीच, निचले तथा ऊपर के रदनक तथा कीलक दांत 16 वें से 22 वें मास तक तथा निचले और ऊपर के चर्वणक दांत 24 वें से 30 वें महीने तक निकलते हैं।

दूध के दांतों के निकलने की प्रक्रिया के पूरे हो जाने के बाद स्थायी दांतों के निकलने का सिलसिला शुरू होता है। पहले सेट के दांतों के समान दूसरे सेट के दांत भी जन्म के पूर्व ही मसूढ़ों में बीजरूप में स्थित होते हैं। इनकी जड़ें प्राथमिक दांतों की अपेक्षा अधिक गहरी होती हैं।

निचले तथा ऊपर के बीच के दांत छठे से आठवें वर्ष के बीच, नीचे और ऊपर के बगल के दांत सातवें से नवें वर्ष के बीच, रदनक या कीलक दांत 11 वें से 14 वें वर्ष के बीच, प्रथम चर्वणक 5 वें से 7 वें वर्ष के बीच, द्वितीय चर्वणक 11 वें से 14 वें वर्ष के बीच और तृतीय चर्वणक 16 वें से 21 वें वर्ष के बीच निकलते हैं।

ज्ञानदांतों (अक्ल के दांत) के निकलने के साथ ही दांतों की संख्या 32 हो जाती है। और दंतोद्भेदन की प्रक्रिया भी संपन्न हो जाती है। लोगों के दांतों में बड़ी विविधता पायी जाती है। वे रंग, रूप एवं आकार में एक दूसरे से भिन्न होते है। कुछ बच्चों को जन्मते समय ही दो दांत होते हैं। किन्हीं को 32 से कम या

अधिक दांत होते हैं। कुछ के दांत सम होते हैं तो किसी के विषम या बाहर निकले हुए होते है। ये भिन्नताएं वंश परंपरागत होती हैं। **लड़कों की अपेक्षा लड़कियों के दांत जल्दी निकलते हैं** और लड़कियों को दंतोद्भेदन काल में कष्ट भी कम होता है। लड़कों के दांत देर से निकलते हैं और उन्हें कष्ट भी अधिक होता है क्योंकि लड़कों के दांत लड़कियों के दांतों की अपेक्षा अधिक ठोस और स्थिर होते हैं।

अतः शेखर के दांत न आने का कारण आनुवंशिक हो सकता है या हो सकता है उसके दांत कुछ ज्यादा ही घने और स्थिर हों। और सुन, तुझे एक और बात बताती हूं। दंतोद्भेदन, दांतों का बढ़ना, गिरना, पुनःनिकलना, स्थिर रहना, उनकी मजबूती, कमजोरी ये सब माता–पिता की जाति, वंश तथा पूर्वजन्म के कर्मों पर निर्भर करता है।

जन्म के समय दांत होना, पहले ऊपर के दांत निकलना, दांतों का दूर–दूर होना, दांतों का बाहर निकला होना, स्थायी दांतों का जल्दी गिर जाना, दांतों का मैला रहना, ये बातें भी वंशगत होती हैं।

दांत निकलते समय अर्थात् दूध के दांतों के निकलते समय बच्चों को बहुत सारे उपद्रव होते हैं। प्रायः उन्हें पतले दस्त आने लगते हैं। इसके अलावा उल्टी, बुखार, आंख आना, खांसी, जुकाम आदि उपद्रव भी प्रायः होते हैं।

दंतोद्भेदन बालक के विकास क्रम की एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। यह स्वयं किसी रोग को उत्पन्न करने का कारण नहीं हो सकती। जब दांत मसूढ़ों से बाहर निकलते हैं तभी मसूढ़ों पर सूजन आती है। उसकी वजह से बच्चे के मुंह से लार बहने लगती है, मसूढ़े किटकिटाते हैं। ऐसी स्थिति में बच्चा जिस चीज को भी पाता है उसे मुंह में डालकर चबाने की कोशिश करता है। इसी कारण, अशुचिता और अधिक लार स्राव होने से उसे बुखार, मुंह में छाले पड़ना, खांसी, पतले दस्त, उल्टी, आंखें आना आदि उपद्रव होते हैं। प्रायः इन पर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं पड़ती। लेकिन कभी–कभी इनसे बच्चे के स्वास्थ्य और जीवन को भी धोखा हो सकता है।

उपर्युक्त उपद्रवों को किसी उपचार की आवश्यकता नहीं होती। दांतों के निकलने के बाद वे स्वतः शांत हो जातें है।

गर्भावस्था में प्रसव से तीन मास पूर्व दांतों को कैल्सियम से मिलने लगता है अतः गर्भवती को छठे महीने से विटामिन–डी तथा कैल्शियम का सेवन उचित मात्रा में कराया जाय तो बच्चे के दांत मजबूत रहते हैं। स्थायी

गर्भावस्था में माता को घी, मक्खन और दूध का अतिरिक्त सेवन कराया जाय तो बालक को दांत निकलते समय कोई तकलीफ नहीं होगी और दांत स्वाभाविक रूप से निकल आएंगे।

दांतों का निर्माण छह से 12 वर्ष के बीच होता है। इस काल में बच्चों को घी, मक्खन, ज्वार, बाजरा, शरीफा, अमरूद, सेब आदि का सेवन कराने से उन्हें विटामिन–डी की प्राप्ति होती है। इस काल में दूध अधिक पिलाने से कैल्शियम की पर्याप्त मात्रा भी मिल जायेगी।

गर्भावस्था में माता को घी, मक्खन और दूध का अतिरिक्त सेवन कराया जाय तो बालक को दांत निकलते समय कोई तकलीफ नहीं होगी और दांत स्वाभाविक रुप से निकल आएंगे।

दंतोद्भेदन काल में बच्चे अगर दांत किटकिटाते हैं तो उन्हें खाने–चबाने के लिए खजूर या छोहारा देना चाहिए। इससे मसूढ़ों से दांतों को बाहर आने में मदद मिलती है। और खजूर पौष्टिक तथा बलवर्धक भी है। दंतोद्भेदन काल में होनेवाले उपद्रवों के कारण बच्चे में उत्पन्न कमजोरी को दूर करने में भी खजूर उपयोगी साबित होगा।

ज्यादातर बच्चों को दांत निकलते समय पतले दस्त, उल्टी, बुखार और सर्दी जुकाम आदि अधिक होते हैं। इन सबकी एक दवा बालचातुर्भद्र है, जिसमें नागरमोथा, पिप्पली, अतिविषा और कर्कटश्रृंगी, ये चार द्रव्य होते हैं। इनमें से नागरमोथा जिसे मुस्ता भी कहते हैं आमपाचक है। अतिविषा स्तंभक–बहती वस्तु (दस्त) को रोकने वाली दवा है। अतः उल्टी और दस्त बंद करती है। पिप्पली और कर्कटश्रृंगी से सर्दी, जुकाम और बुखार में राहत मिलती है।

बच्चों के दांतों की एक शिकायत और है जिसे कृमिदंत कहते हैं। सामान्य भाषा में इसे दांत में कीड़ा लगना कहते हैं। परन्तु इसमें कीडे नहीं लगते। यह बच्चों की शक्कर, टाफी, गुड़ आदि मीठे पदार्थ अधिक खाने की आदत से होता है। मीठा खाने से अम्लरस की उत्पत्ति होती है। अम्लरस की अधिकता से दांतों के ऊपरी भाग में क्षरण होता है जिससे दांत काले या पीले पड़ जाते हैं और उनमें गड्ढे भी पड़ जाते हैं। माता–पिता थोड़ी सावधानी रखें और बच्चे को ज्यादा मीठा खाने न दें तो इस परेशानी से बचा जा सकता है।

दूध भी बच्चे को बिना शक्कर का पिलाने से लाभ अधिक होता है। विशेष रूप से रात में मीठे पदार्थों से बचाना चाहिए। अगर मीठा खिला ही दिया तो पानी पिलाना और कुल्ला अवश्य कराना चाहिए।

सुबह शाम किसी भी चीज को खाने के बाद कुल्ले कराएं। बच्चा दो साल को हो जाय तो दंतमंजन से दांत साफ करने की आदत डालें। अगर वह अंगूठा चूंसता है तो उसकी यह आदत छुड़ाएं। अंगूठा चूसते रहने से दांत सामने की ओर निकलते हैं।

"अंतिम बात यह है कि बच्चा जितना ही अधिक स्तनपान करेगा, उतने ही उसके दांत अच्छे होंगे।"

आहार और हमारा स्वास्थ्य

वैद्य पूर्णचन्द्र जैन, लखनऊ

आयुर्वेद में सभी पुरुषों को आहार की एक योजना समान रूप से उपयोगी नहीं हो सकती। पुरुष की प्रकृति, ऋतु, वय, देश, काल, अन्नपान सेवन के नियम इत्यादि के एवं आहार द्रव्यों के रस, गुण, वीर्य, विपाक आदि के भेद से भिन्न-भिन्न पुरुषों के लिये भिन्न-भिन्न आहार योजना हितकर होती है।

समाहार: जो आहार योजना जिस पुरुष की प्रकृति, वय एवं कार्य आदि को दृष्टि में रखते हुए अनुकूल हो, पांचभौतिक एवं षडरस प्रधान हो और उसके दोष, धातु आदि की साम्यता को बनाये रखे वह समाहार है।

समरस आहार: आहार द्रव्यों को समुचित जानने के लिये जिस प्रकार उनमें विद्यमान गुणों का ज्ञान आवश्यक है उसी प्रकार आहार द्रव्यों के रसों का ज्ञान भी आवश्यक है। समरस आहार का यह तात्पर्य नहीं है कि आहार में रस भर की दृष्टि से सम हो परन्तु शरीर की प्रकृति, वय, ऋतु को देखते हुए जिस रस की जितने प्रमाण में आवश्यकता है उसकी पूर्ति उस प्रमाण प्रत्येक पुरुष को समरस आहार है। पृथक-पृथक रसों का प्रमाण प्रत्येक पुरुष के लिये भिन्न होता है। आहार में इनका रहना स्वास्थ्य संरक्षण के लिये सर्वोत्तम है।

रसों के प्रभेद

आयुर्वेद में रस ६ कहे हैं मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय। कटु एवं कषाय रस को आधुनिक वैज्ञानिक पृथक स्वीकार नहीं करते। रसों का ज्ञान रसना इन्द्रिय के द्वारा होता है जो जिह्वा में स्थित है। आहार द्रव्यों का मुख द्वारा सेवन करने के उपरांत दाँतों से वे चबाये जाते हैं तभी जिह्वा के सम्पर्क में आने पर उनके रस का ज्ञान होता है। इनमें मधुर, अम्ल एवं लवण रस अरुक्ष अथवा स्निग्ध होते हैं और कटु, तिक्त, कषाय रस रूक्ष गुण युक्त होते हैं।

ऋतु का रसों पर प्रभाव

आदान काल की ऋतु शिशिर, बसन्त, ग्रीष्म हैं। इसमें सूर्य एवं तीव्र रूक्ष वायु के कारण आहार द्रव्यों में स्नेहांश का शोषण होता है जिससे इनमें क्रमशः तिक्त, कषाय, कटु रस परिपक्वता को प्राप्त होते हैं। विसर्ग काल में सूर्य का प्रताप क्षीण रहता है और चन्द्रमा बलवाल रहता है। अतः विसर्ग की ऋतु वर्षा, शरद, हेमन्त में अरुक्ष रस क्रमशः अम्ल, लवण, मधुर परिपक्व होते हैं। विभिन्न ऋतुओं के पर्यालोचन की दृष्टि से धान्य गेहूँ आदि फसलों में इसका विचार करना चाहिये।

रस की उत्पत्ति

प्रत्येक रस पाँचभौतिक माना गया है। तथापि उसकी रचना में दो महाभूतों का प्राधान्य होता है। इन महाभूतों के आधिक्त से उत्पन्न विशेषता को रस तथा शेष महाभूतों से उत्पन्न वैशिष्ठ को अनुरस कहते हैं। पृथिवी और अपमहाभूतों के आधिक्य से मधुर रस, पृथिवी एवं तेजमहाभूत के आधिक्य से अम्ल रस, अप एवं तेज महाभूत से लवण रस, वायु एवं तेज महाभूत से कटु रस, वायु और कषाय महाभूत से तिक्त रस तथा पृथिवी एवं वायु महाभूत के आधिक्य से कषाय रस उत्पन्न होता है। इस प्रकार प्रत्येक रस २ महाभूतों के आधिक्य से उत्पन्न होता है तथापि रस की उत्पत्ति में अपमहाभूत की प्रमुख भूमिका मानी जाती है।

रसों का शरीर पर प्रभाव

मनुष्य को स्वास्थ्य संरक्षण के लिये सर्व रसों का सम ही सेवन करना चाहिये। एक रसयुक्त आहार के अभ्यास से हीनताजन्य लक्षणों के साथ दुर्बलता उत्पन्न होती है। दोष धातु एवं मलों की साम्यता का आधार सभी रसों का समसेवन है। वृद्धि और क्षय के सामान्य नियमों के अनुसार जिस रस की उत्पत्ति जिस महाभूत आधिक्य से होती है वह रस उस महाभूत की अधिकतावाले दोष धातु मल की वृद्धि करता है। इसके विपरीत जिस रस की उत्पत्ति में जिस महाभूत की न्यूनता होती है उस रस के सेवन से उस महाभूत की अधिकता वाले दोष धातु मल क्षण होते हैं। रसों की इस क्रिया में तत् तत् रस युक्त आहार द्रव्य वीर्य विरोधी न होना चाहिये। वीर्य विरोधी होने पर रस का कार्य न होकर आहार द्रव्यों का कार्य उनके वीर्य के अनुसार होता है।

रसों का दोषों पर प्रभाव

शरीर में वात पित्त कप दोषों की सामान्यता धातु एवं मलों में भी साम्यता बनाती है साथ ही स्वास्थ्य का संरक्षण करती है। मधुर, अम्ल, लवण रस कफ को प्रकुपित करते हैं और कटु, तिक्त, कषाय उसे शान्त करते

हैं। कटु, तिक्त, कषाय रस वात को प्रकुपित करते हैं तथा मधुर, अम्ल, लवण रस उसे शमन करते हैं। इसी प्रकार कटु, अम्ल, लवण रस पित्त को प्रकुपित करते हैं एवं मधुर, तिक्त, कषाय रस उसे शान्त करते हैं। रसों के सेवन से दोष की वृद्धि अथवा प्रकोप का कारण रस और दोष के उत्पादक महाभूत का समान अथवा विपरीत होना है अर्थात् प्रकोपक रस के गुण दोष के गुणों के सदृश होते हैं जबकि शामक रसों के गुण दोष के विपरीत होते हैं।

प्रवर, अवरमध्यबल : जिन पुरुषों को घी, दूध, तेल, मांस रस एवं छहों रस सात्म्य हों अर्थात् इन द्रव्यों के साथ षडरसों का जो सदा नित्य सेवन करते हैं वे प्रबरबल युक्त होने से शारीरिक एवं मानसिक श्रम को सहन करने के साथ दीर्घायु होते हैं। इसके विपरीत जो सदा रूक्ष आहार द्रव्यों के साथ एक रस का ही सेवन करते हैं वे अल्पबल वाले होते हैं। उक्त दोनों प्रकार के मध्यवर्ती पुरुष मध्य क्लेश सहनशील, मध्यमायु एवं मध्यबल वाले होते हैं।

मधुर रस : मधुर रस युक्त आहार का सेवन करने से रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र धातु तथा स्तन्य (माँ का दूध) आदि उपधातुओं की वृद्धि और क्षतिपूर्ति होती है। यह रस पुरुष को दीर्घायु देनेवाला, अन्तःकरण और इन्द्रियों को अपने-अपने कार्य में कुशल रखनेवाला, शरीर के रंग और कान्ति को सुधारने वाला, बालों का हितकर, नेत्र ज्योति बढ़ाने वाला, त्वचा से स्वेदोत्पत्ति में सहायता कर उसे मुलायम एवं स्निग्ध रखने वाला, मन को सन्तोष देने वाला, मूर्च्छा दूर करने वाला, कण्ठ को हितकर, शरीर के अंग-प्रत्यंगों की पुष्टि करने वाला, शरीर में दृढ़ता देने वाला, घावों को भरने में सहायक, भग्नअस्थि जोड़ने में सहायक, पित्त, विष, तृष्णा एवं दाह का शमन करने वाला, बालक, वृद्ध एवं दुर्बल मनुष्यों में विशेष हितकारक, वातशामक, कफवर्द्धक, शरीर में स्नेह, शैत्य, मार्दव एवं भार को बढ़ाने वाला होता है।

इसके अधिक सेवन से शरीर में मोटापा, आलस्य, निद्रा एवं मांस की वृद्धि होती है। भोजन में अरुचि के साथ मंदाग्नि होती है और शरीर विभिन्न रोगों को सहनशील हो जाता है।

मधुर रस युक्त आहार द्रव्यों में गेहूँ, साठी चावल, शालि चावल, मूँग, मटर, मोठ, मसूर, उड़द, अरहर, गुड़, शक्कर, मांस, मछली, लोबिया, चना, तिल, आलू, दूध, घी, तेल, चर्बी, मज्जा, राजमा, जौ, सेब, आम, मेवा, ईख, मधु, बादाम, चिरौंजी, दाख, खिरनी, नारियल, अंगूर, खजूर, बथुआ, खीरा, तरबूज़, खरबूज़ा, सिंघाड़ा, ककड़ी, पेठा आदि का सेवन किया जा सकता है।

अम्ल रस : अम्ल रस युक्त द्रव्यों के सेवन से भोजन में रुचि बढ़ती है, अग्नि को प्रदीप्त करता है, मुख में लालास्राव पैदा करता है, शरीर की पुष्टि करने वाला, बल एवं उत्साह को बढ़ाने वाला, मन एवं इन्द्रियों को प्रसन्न रखने वाला, आहार को नीचे ले जाने वाला, पुरीष का अनुलोमक एवं स्पर्श में शीत, लघु, स्निग्ध एवं वीर्य में उष्ण होता है। इस रस के अधिक सेवन से पित्त प्रकोक जन्य लक्षण त्वक् विकार एवं शोथ होता है।

अम्ल रस युक्त आहार द्रव्यों में चावल, व्रीहि, कुलथी, पुराना घी, मक्खन, तेल, दधि, तक्र, विभिन्न मद्य, अंगूर, अनार, फालसा, तेल, अलसी, आँवला, नींबू, कैथ, करौंदा, बेर, इमली, आम आदि द्रव्य आते हैं।

लवण रस : लवण रस युक्त आहार द्रव्यों के सेवन से अग्नि प्रदीप्त होती है, भोजन के पाचन में सहायता होती है, शरीरस्थ मलों को बाहर निकालता है, मूत्र को प्रवृत्त कराता है, मार्गों का शोधन करता है, धातुओं के बन्ध को शिथिल करता है, शरीरावयवों में जकड़ाहट, बन्ध, स्रोतोरोध एवं काठिन्य को दूर करने वाला, अवयवों को मृदु करने वाला है। यह रस कुछ गुरू, स्निग्ध, उष्ण, व्यवायी तथा शोषण, स्नेहन एवं स्वेदन में मदद करता है।

इसका अत्यधिक सेवन पित्त एवं रक्त का प्रकोप कर दाह, मूर्च्छा, शोथ, शरीर के वर्ण में विकृति, बाल पकना तथा झड़ना, रक्तपित्त, अम्लोदर, अम्लपित्त, मुखपाक, अक्षिपाक, बलक्षय, ओजक्षय आदि विकारों को पैदा करता है।

लवण रस युक्त आहार द्रव्यों में सौवर्चल सैंधव, विडलवण, औद्भिक तथा सामुद्र नमक एवं विभिन्न यवक्षार, सज्जीखार आदि क्षार द्रव्यों का समावेश होता है।

कटु रस : कटु रस युक्त आहार द्रव्य मुख शोधक, रोचक, दीपक, पाचक, दोषों को शोधक, इन्द्रियों को विशद करने वाला, स्थूलता, स्वेद, क्लेद, मल, स्निग्धता, कृमि, विष, त्वक् विकार, कंडू शोथ, छपाकी एवं अभिष्यन्द नाशक, सन्धिबन्धनों की जकडाहट दूर करने वाला, स्तन्य, शुक्र एवं मेद का नाश करने वाला, लघु, उष्ण और रूक्ष है।

कटु रस युक्त द्रव्यों के अत्यधिक सेवन से कंठ, तालु, ओठ में शुष्कता एवं दाह, पुंसत्व नाश, घबराहट, ग्लानि, शैथिल्य, कृशता, भ्रम, तम, मूर्च्छा, बलक्षय पीड़ा आदि वातज विकार उत्पन्न होते हैं।

शेष पृष्ठ ३९ पर

देशी दवाओं से भी सावधान

आयुर्वेदाचार्य एस.ए. खान, लखनऊ

आयुर्वेदिक औषधियाँ बिना सद्वैद्य की सलाह के न लें। अपने आप औषधि लेने से हानि भी हो सकती है। जैसे अम्लपित्त का रोगी यदि अपनी मर्जी से भूख न लगने पर पाचक चूर्ण लेने लगता है तो भूख बढ़ने के साथ-साथ अम्लपित्त बढ़ जायगा ओर आमाशय में व्रण हो जायेंगे।

इसी प्रकार पौष्टिक, धातुवर्धक, वीर्यवर्धक औषधियाँ अपनी मरजी से लेने पर शीतवीर्य होने के कारण अग्निमाँद्य या आमदोष उत्पन्न कर सकती है जो अन्य बीमारियों का कारण हो सकती है।

अपनी प्रकृति का कुशल वैद्य से निर्धारण कराकर ही औषधि लें और चिकित्सक द्वारा निर्देशित आहार-विहार का पूर्ण रूप से पालन करें। आयुर्वेद चिकित्सा में प्रकृति, दोष (वात, पित्त और कफ) दूष्य (सात धातुएँ व मल) आदि का सम्यक् विचार किया जाता है। बिना इनका विचार किये मॉडर्न मैडिकल पैथोलॉजिकल टेस्ट्स के आधार पर आयुर्वेदिक औषधियाँ लेना उचित नहीं है। वैसा करने पर पूर्ण लाभ की आशा न करें।

मैंने ऐसे नुस्खे देखे हैं जिनमें इतनी अधिक औषधियाँ लिखी होती हैं कि जिन्हें संग्रहणी या अग्निमाँद्य का रोगी पचा नहीं सकता जबकि आयुर्वेद का सिद्धांत है कि औषधि पचने पर भोजन और भोजन के पचने पर औषधि देनी चाहिये। बहुत अधिक औषधियाँ लेने से वह पचती नहीं, उल्टे अग्निमाँद्य पैदा कर सकती है। दवा लेने से पहले यह अवश्य देख लें कि कहीं वे उनकी पाचन-शक्ति से अधिक तो नहीं।

यह एक भ्रांति है कि आयुर्वेदिक औषधियाँ हमेशा देर से लाभ करती हैं। यदि औषधि प्रकृति, दोष, दूष्य, रोग आदि के सम्यक विचारोपरांत दी गयी है और गुणवान है तो लाभ शीघ्र दर्शाती है। यदि औषधि लेने के २-३ दिन के अन्दर कतई लाभ नहीं दिखता तो समझें कि कहीं कुछ गड़बड़ है।

मैंने ऐसे भी रोगी व्यवस्था-पत्र (नुस्खे) देखे हैं जिनमें स्वर्णघटित या मँहगे रस भस्म युक्त योग तो लिखे होते हैं परन्तु किसी अनुपान या सहपान का निर्देश नहीं होता। रोगी अपनी मरजी से पानी के साथ गोली निगल लेता है और मनमाना आहार-विहार करता है। ऐसे उपचार से लाभ कम हानि की सम्भावना अधिक रहती है। क्योंकि इस व्यवस्था में दवा अधिक समय तक खानी पड़ती है। अधिक समय तक रस, भस्म खाने से वे शरीर में एकत्र होने लगती हैं तथा विषयुक्त योगों से इसी विष के चिरकारी प्रभाव दृष्टिगोचर हो सकते हैं।

पूर्ण शास्त्रीय ढंग से बनी औषधियाँ ही सर्वोत्तम होती हैं। शास्त्रीय ढंग से बने भस्म ही ग्रहण करें। मशीनी और बिजली की भट्टी में बनी भस्म निरापद नहीं।

जड़ी-बूटियों की आयु बहुत कम होती है। एक वर्ष के बाद उनके गुण कम होने लगते हैं। परन्तु पन्सारी के यहाँ से मिली जड़ी-बूटियाँ दसियों साल पुरानी या घुनी, सड़ी और निर्वीर्य हो सकती हैं। अतः जड़ी-बूटियाँ ताजा ही ग्रहण करें तभी उनके निर्धारित गुण कर्म उनमें मिल सकते हैं।

घटिया औषधियों ने जन- स्वास्थ्य के लिये विकराल खतरा उत्पन्न कर दिया है। घटिया दवा कम्पनियाँ कुकुरमुत्तों की तरह फैल रही हैं। इन दवाओं के निर्माता जनता में वितरित करनेवाले लोगों को विभिन्न प्रलोभन देने में कामयाब हो जाते हैं और अपनी दवाएं बेच देते हैं। इससे खरीदार का पैसा, समय बर्बाद होता है। रोगी को लाभ नहीं होता है। कभी-कभी रोग और बढ़ जाता है। इसलिये सावधान! प्रयोग करने से पहले देख लें कि दवा कहीं घटिया या नकली तो नहीं है। हर हाल में रोगी को गुणवान और शुद्ध औषधि ही मिलनी चाहिये।

वार्षिक शुल्क में ६ रु. बचायें

जीवनीय, अपने वार्षिक सदस्यता शुल्क में २०% की छूट प्रदान करती है। इस योजना के आधार पर पाठक मात्र २४ रु. में ही साल भर के लिए जीवनीय पत्रिका प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए आपको उन २० व्यक्तियों के नाम व पते लिखकर हमको भेजना है जो आपके विचार में जीवनीय की सदस्यता लेने के इच्छुक हों।

जीवनीय मुफ्त में प्राप्त करें – आपके द्वारा सुझाए गये २० नामों में से यदि कोई भी ८ लोग पत्रिका की सदस्यता स्वीकार करते हैं तो आप साल भर तक के लिए जीवनीय मुफ्त में पाते रहेंगे या आपके द्वारा बताये किसी भी व्यक्ति को हम यह उपहार दे सकते हैं लेकिन शर्त यह है कि वह भारत में रहता हो।

सावधान! बच्चों के दूध में ज़हर

मलेशिया के पेनांग शहर में "पेनांग उपभोक्ता संघ" नामक संगठन ने अपने एक बृहद सर्वेक्षण के दौरान यह पाया है कि विभिन्न कम्पनियों द्वारा निर्मित पाउडर दूध में लेड (सीसा) तत्व की इतनी अधिक मात्रा है जो प्राण घातक है।

इस संगठन ने बाजार से छः कम्पनियों के पाउडर दूध के डिब्बे खरीदे और उनका परीक्षण करने पर यह मालूम हुआ कि उनमें मलेशियन आहार सुरक्षा मानक स्तर से अधिक सीसे की मात्रा पायी गयी जो बच्चों द्वारा अधिक दिनों तक लेने पर मस्तिष्क विनाश का कारण बन सकती है तथा थोड़े दिनों तक लेने पर दौरे आना, बेहोशी, झटके एवं मानसिक उपद्रव पैदा कर सकती है। आहार संहिता १९८५ के अनुसार बच्चों के पाउडर दूध में सीसे की मात्रा अधिक से अधिक ०.५ हिस्सा प्रति दस लाख अंश तक ही निर्धारित की गयी है। जब विभिन्न शिशु आहारों के नमूने "पेनांग उपभोक्ता संघ" द्वारा जाँचे गये तो उसके परिणाम इस प्रकार पाए गए :–

– लैक्टोजेन शिशु आहार में सीसे की मात्रा १ हिस्सा प्रति दस लाख अंश पाई गई (जो कि सुरक्षा मानक स्तर से १००% अधिक थी)।

– डच बेबी में सीसे की मात्रा ०.८ हिस्से प्रति दस लाख अंश पाई गयी (जो कि सुरक्षा मानक स्तर से ६०% अधिक थी)।

– ड्यूमेक्स शिशु आहार में सीसे की मात्रा ०.८ हिस्से प्रति दस लाख पायी गयी (यह भी सुरक्षा मानक स्तर से ६०% अधिक थी)।

परन्तु इतना ही काफी नहीं है। वहाँ की माताओं ने "पेनांग उपभोक्ता संघ" से कुछ और शिकायतें भी की हैं। उनका कहना है कि जब जब हम डिब्बे के ढक्कन को हटाकर उसकी सील तोड़ते हैं तो उस सील की धातु के कुछ बारीक चूर्ण टुकड़े दूध पाउडर में गिर जाते हैं जो सम्पूर्ण पाउडर दूध को प्रदूषित कर देते हैं और ऐसा दूध उनके बच्चों के लिए घातक हो सकता है। इन शिकायतों के आधार पर "पेनांग उपभोक्ता संघ" ने पुनः कुछ कम्पनियों के नये डिब्बे बाजार से मँगाकर उनकी धातु से बनी सील तोड़ी और जो टुकड़े धातु के पाउडर दूध में गिर गये थे उनके नमूनों का परीक्षण किया। परिणाम इस प्रकार हैं–

– मोमाइक शिशु आहार में सीसे की मात्रा १.६ हिस्से प्रति दस लाख पायी गयी (जो कि मलेशियन सुरक्षा मानक स्तर से २२०% ऊपर थी तथा ब्रितानी सुरक्षा मानक स्तर से ६००% ऊपर थी)।

– लैक्टोजेन में सीसे के १.४ हिस्से की मात्रा प्रति दस लाख अंश में पायी गयी (जो कि मलेशियन सुरक्षा मानक से १८०% ऊपर थी तथा ब्रितानी सुरक्षा मानक स्तर से ६००% ऊपर थी)।

– एस.एम.ए. शिशु आहार में सीसे की मात्रा १.१ हिस्से प्रति दस लाख पायी गयी (जो कि मलेशियन सुरक्षा मानक से १२०% अधिक थी तथा ब्रितानी मानक से ४५०% अधिक थी)।

– एस–२६ शिशु आहार में सीसे की मात्रा ०.८३ हिस्से प्रति दस लाख पाई गयी (जो कि मलेशियन सुरक्षा मानक स्तर से ६६% अधिक थी तथा ब्रितानी मानक स्तर से २१५% अधिक थी)।

पेनांग उपभोक्ता संघ के परिणामों पर एक नजर

तालिका १ शिशु आहार में सीसे की मात्रा

बाजार नाम	सीसा हिस्सा प्रति दस लाख	०.५ प्रति दस लाख से ऊपर %
लैक्टोजेन	१.०	१००%
डच बेबी	०.८	६०%
ड्यूमेक्स	०.८	६०%

तालिका २ शिशु आहार में सीसे की मात्रा + धातु की सील के टुकड़े

प्रोमाइल	१.६	२२०%
लैक्टोजेन	१.४	१८०%
एस.एम.ए.	१.१	१२०%
ए–२६	०.८३	६६%

(कैप, न्यूज़लेटर, पेनांग से साभार)

आहार द्रव्य

मसाले और उनके औषधीय उपयोग

डॉ. श्रीमती सुनन्दा रानडे

भारत मसालों के ज्ञान में अग्रणी रहा है। ये सुवासकारी द्रव्य खाद्य को सुरभित करते हैं, उन्हें देर तक ताजा बनाये रखते हैं और उन्हें सुपाच्य भी बनाते हैं। आयुर्वेद में इन मसालों के औषधीय गुण विस्तार से बताये गये हैं, जिनमें से यहाँ हम हींग, इलायची, दालचीनी, लौंग और काली मिर्च के गुण बतायेंगे।

हींग : यह स्वाद में तीखा और कडुआ होता है और इसकी गंध भी तेज होती है। शिशुओं को पेटदर्द होने पर चुटकी भर हींग का चूरा चौथाई चम्मच पानी के साथ पिला दें या उतने ही पानी में जरा–सी हींग घिसकर पिला दें। यदि बच्चे को अपच या गैस के कारण पेटदर्द है तो वह ठीक हो जायगा। अफारा में हींग को घिसकर पेट पर लगाने से आराम मिलता है और क्षरित दाँतों के गड्ढों में लौंग का तेल और हींग भरने से उत्तम लाभ मिलता है। चोट की सूजन में एक बड़े चम्मच नारियल तेल में एक टुकड़ा हींग घोलकर लेप करने से दर्द कम होता है। खांसी और श्वसनी शोथ (ब्रॉंकाइटिस) में दो चम्मच शहद, चौथाई चम्मच सफेद प्याज़ का स्वरस, एक चम्मच पान का रस और आधे से एक मटर बराबर हींग मिलाकर दिन में तीन बार दें।

इलायची : यह मसालों की रानी कहलाती है। यह मिष्ठानों में पड़ कर उन्हें सुगन्धित करती है और यदि चाय बनाते समय उसमें पड़ती है तो चाय को 'सुपर चाय' बनाती है। मुँह की दुर्गन्ध दूर करने के लिए इसे चबाते हैं। गर्भिणी की मतली, उल्टी आदि में भी यह उपयोगी है। याददाश्त कमजोर होने की शिकायत में दूध में चुटकी भर इलायची चूर्ण उबालें। दूध को ठंडा करें, फिर उसमें शहद डालकर उसे मीठा करें ओर रात में सोने से पूर्व नित्य पियें तो याददाश्त में अवश्य ही सुधार होगा। चक्कर आने में जीरे और इलायची का काढ़ा राहत देता है। दालचीनी और इलायची के फाँट (चाय) से गरारा करने से ग्रसनी–शोथ दूर होता है।

दालचीनी : इसका स्वाद कसैला होता है। यह सर्दी की विशिष्ट दवा है। गले की पीड़ा, ग्रसनी शोथ के लिए दो इंच टुकड़ा दालचीनी का मोटा चूर्ण बनाकर चुटकी भर कालीमिर्च के चूर्ण के साथ एक गिलास पानी में उबालें और शहद के साथ दिन में तीन बार दें। खाना खाने के तुरन्त बाद एक टुकड़ा दालचीनी चबाने से साँसों की दुर्गन्ध और दाँतों की सड़न दूर होती है।

हर रात चुटकी भर दालचीनी चूर्ण को शहद के साथ लेने से स्मरण शक्ति बढ़ती है और तन्त्रिका तनाव की रोकथाम होती है। श्वसनी शोथ में यह प्रयोग कफनिस्सारक का काम करता है। ताजा नींबू के रस में दालचीनी घिसकर मुँहासों और काले मस्सों पर लेप करने से वे मिटते हैं और दालचीनी और चन्दन का चेहरे पर लेप प्रसाधन का काम करता है। इस लेप से चेहरे पर झुर्रियाँ देर से आती हैं और त्वचा सूखी नहीं पड़ती है।

अपच में बताशे या चीनी में एक–दो बूँद दालचीनी का तेल लेने से गैस निकल जाती है और आराम मिलता है। दन्त–क्षय में दालचीनी के तेल में तर की हुई रूई दाँत के गड्ढों में ठूँस दी जाती है।

लौंग : लौंग सुखाई हुई कलियाँ हैं। यह प्रकृति से उष्ण और स्वाद में तीखी है। इसमें भोजन के तुरन्त बाद एक लौंग चबाने से कफनिस्सारण होता है। दिन में तीन बार शहद के साथ भुनी हुई लौंग का चूर्ण लेने से सर्दी में लाभ होता है। सर्दी के कारण सिरदर्द होने पर भुनी हुई लौंग का लेप माथे पर लगाना चाहिए।

एक टुकड़े मिश्री में चुटकी भर 'सोडा बाइकार्बोनेट' और एक या दो बूँद लौंग का तेल टपका कर दिन में तीन बार देने से अपच, गैस और जठर शूल में लाभ होता है। दन्तक्षय में भी यह तेल लाभकारक है।

कालीमिर्च : इसकी तासीर गरम है। दीपन होने के कारण यह भूख को बढ़ाती है। कालीमिर्च, सोंठ और पिप्पली का बराबर–बराबर चूर्ण दिन में तीन बार आधा–आधा चम्मच लेने से अपच दूर होती है और भूख बढ़ती है।

गले की खराश के कारण खाँसी आने पर तीन लौंग, चुटकी भर अजवायन और एक डली नमक चूसें। शिकायत जाती रहेगी।

नित्य कालीमिर्च चूर्ण और नमक का प्रयोग करने से दन्तक्षय से बचाव होता है। खुजली में लौंग का तेल लगाने से फौरन लाभ होता है। उपर्युक्त सभी द्रव्य गरम मसाले के घटक हैं। 'गरम मसाला' नाम से स्पष्ट है कि ये पाचन में सहायक हैं।

विश्व भेषज – अदरख

डॉ. श्रीमती सुनन्दा रानाडे, पुणे

सुगन्ध एवं स्वाद वृद्धि हेतु सेवन की जाने वाली अदरख से प्रत्येक गृहिणी भली–भाँति परिचित है। इसको संस्कृत में विश्व अथवा विश्व भेषज के नाम से भी जाना जाता है जिसका अर्थ है सम्पूर्ण विश्व हेतु उपयोगी औषधि। लैटिन में इसको *जिंजिबर आफ़िसिनेल* कहते हैं। इसका प्रयोग वैदिक काल से होता चला आ रहा है। इसको महाऔषधि के नाम से भी जाना जाता है। यह एक टेढ़ी–मेढ़ी जड़ है जिसमें गाँठें होती हैं। सूखी अदरख को "सोंठ" कहते हैं इसका प्रयोग अधिकांशतः औषधि के रूप में किया जाता है।

यद्यपि अदरख की खेती सम्पूर्ण भारत में की जाती है परन्तु केरल की अदरख सुगन्ध एवं स्वाद में सर्वोच्च है। ताज़ा एवं सूखी अदरख तीव्र स्वाद एवं उष्णता के कारण अग्निदीपन एवं आमपाचन का कार्य करती हैं। दोनों ही प्रकार की अदरख कफ एवं वात शामक हैं।

औषधीय उपयोग

- भोजनोपरांत ताजा अदरख को नियमित रूप से चूसते रहने से अपच एवं अफारा में लाभ होता है। अदरख को लौंग एवं नमक के साथ चूसना गले में जलन एवं स्वरभंग में लाभकारी है।
- ताजा अदरख का स्वरस, नींबू का स्वरस, ताजे पुदीने का स्वरस – प्रत्येक को एक चाय के चम्मच की मात्रा में लेकर उसमें एक चम्मच शहद मिलाएँ। इसे दिन में तीन बार चाटने से श्वास नली की सूजन, गले की जलन, स्वरभंग एवं अपच में लाभ होता है। इन्फ्लुएन्ज़ा ज्वर हेतु ताजा अदरख का एक चाय का चम्मच भर स्वरस एक कप मेथी के क्वाथ में थोड़ी मात्रा में शहद के संग देने से तेजी से पसीना आता है।
- खाँसी एवं सर्दी के लिए चाय का आधा चम्मच अदरख का स्वरस शहद के साथ दिन में ३ बार दिया जाए। सामान्य सर्दी के लिए अदरख, दालचीनी एवं मिश्री का क्वाथ चाय के चार चम्मच की मात्रा में दिन में दो बार पिलायें। सोंठ एवं वच का माथे पर लेप सर्दी के कारण हुए सिरदर्द एवं नाक की नली की सूजन हेतु लाभकारी है।
- अदरख का ताजा स्वरस, सेंधा नमक एवं ताजे नींबू के स्वरस के साथ अपाचन एवं कोष्ठबद्धता में लाभकारी है।
- नारियल के तेल में भुनी हुई ताजी अदरख जोड़ों की सूजन, सियाटिका, स्नायु–शूल आदि रोगों के लिए एक उत्तम लेप है।
- घी में भुनी हुई ताजी अदरख एवं मट्ठे का प्रयोग अतिसार एवं आमातिसार में किया जाता है। इसके बहुत अच्छे परिणाम सामने आये हैं।
- अफारा अथवा गैस के कारण पेट में दर्द हो तो ५ मि.ली. अथवा आधा चाय का चम्मच ताजा अदरख का स्वरस एवं हींग का मिश्रण दिन में दो से तीन बार दें।
- सोंठ आमवात एवं बवासीर हेतु एक उत्तम औषधि है। सोंठ का क्वाथ चाय के चम्मच भर अरण्ड के तेल के साथ रात्रि के समय सेवन जोड़ों की सूजन एवं आमवात जैसे रोगों में दर्द को कम करता है। सोंठ को केवल अधिक पीड़ा वाले अर्श/बवासीर रोग में प्रयोग करना चाहिये। इसका प्रयोग खूनी बवासीर में उचित नहीं है। उष्ण एवं तीव्र होने के कारण इसको ग्रीष्म काल एवं अक्टूबर की गर्मी में नहीं प्रयोग करना चाहिये।
- अचेतना एवं आकस्मिक आघात की दशा में सोंठ का चूर्ण पिण्डलियों एवं तलवों पर रगड़ने से रक्त संचरण का सुधार हो जाता है।

सोंठ का कोयला अफारा की उत्तम औषधि है। इसको दाँत पर मलने से दाँतों के दर्द एवं उनके खट्टे होने में लाभ होता है। कफ युक्त खाँसी हेतु मधु में मिलाकर बनाई हुई इसकी चटनी चाटना चाहिये। यदि गाढ़ा कफ गले में अटका हुआ मालूम हो तो सोंठ का टुकड़ा चूसना चाहिये।

ताज़े अदरख की खीर

ताजी अदरख छीलकर अच्छी तरह धो लें फिर मिक्सर में उसको भली–भाँति पीस लें। एक कप पिसे हुए अदरख को आग पर घी में भूनें। तदुपरांत उसमें दो कप दूध एवं दो कप चीनी मिलायें और अच्छी तरह चलाते रहें। तैयार होने पर इसमें केसर, इलायची तथा जायफल का चूर्ण मिलायें। यह खीर खाँसी, अपचन में लाभकारी तथा अग्निदीपक है। विशेषकर जच्चा के लिए बेहतरीन तोहफा है।

(हकीम गयासुद्दीन नदवी, लखनऊ द्वारा अंग्रेजी से अनूदित)

चर्म रोगों में लाभकारी

बाकुची

आयुर्वेदाचार्य एस.ए. खान, लखनऊ

बाकुची या बाउची के काले या भूरे रंग के बीज बाजार में मिलते हैं। ये एक छोटे से क्षुप के बीज होते हैं। इसमें एक विशेष प्रकार की गन्ध होती है। औषध के रूप में बाकुची के बीजों का ही प्रयोग किया जाता है। बाकुची का प्रयोग अधिकतर श्वित्र (सफेद दाग) रोग पर किया जाता है।

विभिन्न भाषाओं में बाकुची के नाम : हिन्दी – बाकुची, वाकुची, बाउची; संस्कृत – बाकुची, सोमराजी; पंजाबी, मराठी और गुजराती – बावची; बंगाली – हाकुच; तेलुगु – बावंचि; तमिल – कार्पोकराति; अंग्रेजी – पर्पुल फ्लीबेन; लैटिन – *सोरालिया कोरिलीफोलिया।*

बाकुची के बीजों का रस कसैला और कड़वा होता है। वीर्य उष्ण और पचने पर विपाक कटु हो जाता है। अधिक मात्रा में देने पर रेचक और आँतों में क्षोभ उत्पन्न करता है।

औषधीय गुण

यह वात, कफ शामक और पित्त वर्धक होता है। कफज रोग, कुष्ठ, पामा, दद्रु, कफज कब्ज, कृमि, सफेद दाग आदि में लाभ करता है। बाकुची के बीजों को शुद्ध करके प्रयोग करना चाहिये।

बाकुची का शोधन

बाकुची के बीजों को गोमूत्र में सात दिन तक भिगो कर रखना चाहिये। नित्य गोमूत्र बदलते रहना चाहिये। फिर पानी से धोकर सुखाकर रख लें।

बाकुची के बीजों का प्रयोग अकेले तथा योगों में भी किया जाता है। इसके तेल का भी प्रयोग त्वक् रोगों व सफेद दाग में किया जाता है।

सफेद दाग में बाकुची का प्रयोग

बाकुची के शुद्ध बीजों को पानी में पीसकर चटनी की तरह बनाकर सफेद दागों पर लेप करते हैं।

बगैर शुद्ध किये बीजों को पानी में या गोमूत्र में पीसकर लेप करते हैं। किसी–किसी रोगी में दाग के स्थान पर फफोले पड़ जाते हैं। इन छालों को फोड़कर उसपर तिल का तेल लगाना चाहिये। मरिचादि तेल भी लगा सकते हैं। फफोले के स्थान की त्वचा पूर्ववत् हो जाने पर सामान्य रंग की हो जाती है। यदि ऐसा न हो तो दुबारा उपरोक्त प्रयोग दोहराना चाहिये।

कभी–कभी बाकुची लगाने के स्थान पर फुंसियाँ और दाने निकल आते हैं। इन पर मरिचादि तेल लगाना चाहिये। दाने ठीक हो जाने पर पुनः बाकुची लेप लगाना चाहिये और तब तक लगाते रहना चाहिये जब तक त्वचा का रंग काला न हो जाये।

बाकुची और बिछुआ के बीज बराबर–बराबर मात्रा में लेकर पानी या गोमूत्र, मट्ठे या कांजी या सिरके में पीसकर लगाना चाहिये।

कभी–कभी बाकुची का लेप लगाने से दाग वाले स्थान पर शीघ्र प्रभाव नहीं जान पड़ता। ऐसी स्थिति में बाकुची के बीजों के साथ चित्रक मूल या कठगूलर की छाल बराबर मात्रा में मिलाकर लेप किया जाये। इससे छाले मिट जाते हैं और दाग शीघ्र ठीक होने लगते हैं।

कभी–कभी ऐसा भी होता है कि यदि दाग वाले स्थान को ताँबे की वस्तु से खुरच कर बाकुची का लेप लगाया जाये तो शीघ्र लाभ होता है। इसी प्रकार दाग खुरच कर बाकुची का तेल लगाया जा सकता है।

श्वित्र पर किये गये अपने अध्ययन में मैंने पाया है कि बाकुची के प्रयोग के साथ यदि रोगी की प्रकृति निर्धारित कर तदनुसार आहार–विहार सेवन कराया जाये और बाकुची का आंतरिक सेवन भी कराया जाये तो लाभ अधिक होता है। मात्र लेप लगाने से सभी रोगियों पर एक सा लाभ नहीं होता है। श्वित्र रोग जितने कम समय का होता है लाभ उतना ही शीघ्र होता है। साथ ही मोटे तौर पर कफ, पित्त वर्धक आहार–विहार वर्जित करना होता है।

अनुभव

माथे की बिंदिया का दाग-बागुची से सरल इलाज

भारतीय संस्कृति में नारी के लिए माथे की बिन्दी सुहाग के प्रतीक के रूप में मानी जाती रही है। अनादि काल से सुहागिन स्त्रियाँ अपने माथे की शोभा बिन्दी या सिन्दूर से बढ़ाती रही हैं। आजकल महिलाएँ बिन्दी के लिये सिन्दूर, टिकुली, या अन्य प्रकार के तरल पदार्थ, लाल रंग के घोल आदि का प्रयोग भी करती हैं। आये दिन समाचार-पत्रों में श्रृंगार प्रसाधन कम्पनियों के अनेक आकर्षक विज्ञापन भी बिन्दियों के प्रयोग हेतु देखने को मिलते हैं। इन बिन्दियों में ऐसा रसायन मिला होता है अथवा टिकुलियों के पीछे जो माथे पर चिपकने वाला पदार्थ लगा होता है, उसके निरन्तर प्रयोग से स्त्रियों के माथे पर बिन्दी के आकार का गोल निशान बन जाता है। इसका रंग माथे की त्वचा से भिन्न होता है। इस निशान की ओर ध्यान न दिया जाय तो यह सफेद दाग या धब्बे की शक्ल ले लेता

है। इसे मिटाने के लिये डॉक्टर अनेक प्रकार की दवाएं, ऑइन्टमेन्ट आदि लगाने की सलाह देते हैं। अक्सर देखा गया है कि अनेक उपचारों के बावजूद भी यह दाग या धब्बा दूर नहीं होता है तथा माथे पर निशान बना रह जाता है जो चेहरे की सुन्दरता को असुन्दरता में बदल देता है।

आयुर्वेद में इसका सरल इलाज है जिसका न तो कोई मूल्य है न कोई औषधि निर्माण की प्रक्रिया। इसकी दवा है बाकुची जिसे बावची या वाउची के नामों से भी जाना जाता है। बाजार में पंसारी की दुकान से इसे खरीद लें तथा पानी में पीसकर माथे के धब्बे वाले स्थान पर रात्रि में नित्य लगायें। लगभग १५ दिन लगाने से दाग या धब्बा बिल्कुल गायब हो जायगा। त्वचा पहले जैसी हो जायगी। कोई जलन या चुनचुनाहट भी नहीं होगी। माथे के दाग को दूर करने की यह अचूक औषधि है। इसको मैनें स्वयं अपने ऊपर एवं अव्य कई स्त्रियों पर आजमाया है।

श्रीमती कुसुम मेहरोत्रा, लखनऊ

पृष्ठ ३३ का शेष

आहार...

कटु रस एवं कटु विपाक युक्त द्रव्यों में कुधान्य, विभिन्न स्नेह, तेल, सरसों विभिन्न मसाले, अदरक, धनिया, प्याज, हरी मिर्च, मेथी, जीरा, काली मिर्च, लौंग, सौंफ, हींग, हल्दी, तरकारियों में परवल, बथुआ, मूली, नारीशाक, मटर, सहजन, लहसुन, बैंगन आदि हैं।

तिक्त रस : तिक्त रस युक्त द्रव्यों के सेवन से भोजन में अरुचि दूर होती है। ये द्रव्य दीपक, पाचक, दोषों के शोधक, विष, कृमि, कंडू, त्वक् विकार, तृषा, दाह एवं मूर्च्छा का नाश करने वाले, ज्वरघ्न, लेखन, पुरीष, मूत्र, मूद, स्वेद, क्लेद, लसीका, पूय, मज्जा, पित्त एवं वसा को सुखाने वाले, छेदन, रूक्ष, शीत एवं लघु होते हैं।

इनके अत्यधिक सेवन से शरीर में रूक्षता, खरता, विशदता में वृद्धि होती है, धातुक्षय उत्पादक, बलहानि, कृशता, ग्लानि, मोह, भ्रम, आक्षेप, शिरःशूल तथा तोद, भेद, छेद आदि वात वेदनाओं को उत्पन्न करते हैं।

तिक्त रस युक्त द्रव्यों में विभिन्न धात्वजक्षार, पोटैशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम के लवण, हींग, हल्दी आदि मसाले तथा मेथी, करेला, परवल, महुआ, मूली, बैंगन आदि तरकारी आती हैं। कटु एवं तिक्त रसों में सभी तरकारियाँ आती हैं जिनके द्वारा आहार में विटामिन्स की आपूर्ति भी होती है।

कषाय रस : कषाय रस युक्त द्रव्य ग्राही, मल को बाँधने वाले, व्रणों को भरने वाले, शोधन, शोषण, स्तम्भन, लेखन करने वाले, रूक्ष, शीत और अलघु होते हैं।

इनके अत्यधिक सेवन से मुख शोथ, हृदय-पीड़ा, आध्यान, स्रोतों का अवरोध, नपुंसकता, स्तम्भ, आक्षेप, आकुंचन आदि विकारों के जनक होते हैं।

कषाय रस युक्त द्रव्यों में कोंदों, नीवार, श्यायाक, मूँग, लोबिया, कुलथी, चना, मसूर, तिल, मटर, मोठ, खेसारी, जौ, अरहर, लाव एवं विष्किर वर्ग के पक्षी का मांस, बकरी का दुग्ध, अनार, जामुन, तेंदू, सेम, मधु, तेल, कैथ, महुआ, सिंघाड़ा, आँवला, पालक, कच्चा आम, आदि द्रव्य आते हैं।

(क्रमशः)

तीसरी दुनिया और परम्परागत चिकित्सा पद्धतियाँ

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार औद्योगिक देशों में इन दिनों प्राकृतिक जड़ी-बूटियों तथा "नरम" दवाओं की खोज के प्रति दिलचस्पी बढ़ी है और इसमें इस संगठन द्वारा १९७६ में शुरू किए गए कार्यक्रम का भी योगदान है। लेकिन दूसरी ओर यह भय है कि यदि तीसरी दुनिया के देशों द्वारा अपनी परम्परागत औषधियों की उपेक्षा होती रही तो दुनिया की दो-तिहाई आबादी के लिए उपचार दुर्लभ हो सकता है। एक आशा की किरण देखने को मिलती है जब हम अपने देश में परम्परागत चिकित्सा पद्धतियों से उपचार करने वाले चिकित्सकों (जिनकी संख्या लगभग ३००,००० है) पर नजर डालते हैं। चीन में एक अनोखा मेल मिलता है जहाँ पश्चिमी पद्धति में प्रशिक्षित करीब एक-तिहाई डॉक्टर ऐसे हैं जो अपने काम के साथ परम्परागत तरीके अपनाने की जानकारी भी रखते हैं। यह भी सत्य है कि लगभग तीस प्रतिशत "आधुनिक औषधों" का मूल स्रोत जड़ी-बूटियों से प्राप्त किया जाता है जैसे हृदय रोग की दवा डिजीटेलिस फॉक्सग्लव से, नाइटशेड (बेलाडोना) से एट्रोपिन, इसपरिन का सक्रिय कारक बिल्व वृक्ष की छाल से ही प्राप्त किया जाता है।

परम्परागत चिकित्सा प्रणालियाँ व उनका ज्ञान सीमित नहीं है बल्कि इसमें परम्परागत दाइयाँ, स्वास्थ्य परिचर्या में उनकी की भूमिका से लेकर एक्यूपंक्चर, हड्डी बैठाना, योग, व्यायाम तथा मनः चिकित्सा जैसी बातें भी निहित हैं। इस चिकित्सा पद्धति की उपयोगिता का एक और पहलू हैं जैसे मैक्सिको में शिशु के जन्म-नाल की ड्रेसिंग मकड़ी के जाले से करने की प्रथा, जिसको वर्षों तक बर्बर माना जाता रहा लेकिन अब पता चला है कि मकड़ियों की लार में कीटाणु-विरोधी तत्व होते हैं।

तीसरी दुनिया के देशों को इन चिकित्सा पद्धतियों से कुछ अतिरिक्त फायदे और नुकसान भी हैं। इनकी वास्तविक लागत ज्यादा नहीं है, विदेशी मुद्रा की इनके लिए जरूरत नहीं पड़ती और औषधीय पौधे एकत्र करने वालों को आर्थिक लाभ भी होता है। लेकिन इसके साथ एक सम्भावना गलत पौधे बटोर कर लाने की भी होती है क्योंकि कुछ पौधे काफी विषाक्त भी हैं।

इन कारणों का हल आवश्यक है और इसके लिए तीसरी दुनिया के देशों ने अपनी-अपनी चिकित्सा पद्धतियों का सम्यक् अध्ययन प्रारम्भ किया है। इसके अतिरिक्त विश्व स्वास्थ्य संगठन देशों के बीच अनुसन्धान और जानकारियों के आदान-प्रदान की व्यवस्था और परम्परागत चिकित्सा पद्धतियों को उस देश की स्वास्थ्य प्रवृत्तियों का ही अंग बना देने में विश्वास करती है। इसमें सबसे पहले स्वास्थ्य-कर्मियों को ऐसी जानकारी और कौशल प्रदान करने पर केन्द्रित होगा जो उन्हें औषधीय-पौधे पहचानने में सहायक हो सके।

हालाँकि विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अपना परम्परागत चिकित्सा पद्धति कार्यक्रम १९७६ में शुरू किया लेकिन स्थापना के इतने वर्ष बीतने के बाद और कई प्रस्ताव पारित करने के बाद यह भय बना है कि कहीं अंततः तीसरी दुनिया के देशों को औषधीय-पौधों का आयात विकसित देशों से न करना पड़े। इसके अतिरिक्त विश्व संगठन ने १९९०-९५ के लिए घोषित कार्यक्रम में इसकी यह कहते हुए दुर्भाग्यपूर्ण ढंग से उपेक्षा कर दी है कि "परम्परागत चिकित्सा प्रणालियों को वैज्ञानिक धरातल पर स्थापित करना बहुत जरूरी है।"

इसी तरह रसायन तथा औषध-निर्माण उद्योग द्वारा औषधीय पौधों के क्रियाशील तत्वों को अलग करने की कोशिशों को प्रोत्साहित करना उचित नहीं होगा।

इसके लिए तीसरी दुनिया के देशों की सरकारों द्वारा एक निश्चित नीति निर्धारण और परम्परागत औषधों के भण्डार को सुरक्षित करना नई पीढ़ियों के लिए एक उत्साहवर्द्धक कदम होगा।

(माइकेल क्रॅकनेल के "तीसरी दुनिया के देशों में परम्परागत चिकित्सा पद्धतियों को मान्यता" पर आधारित, सर्वोदय प्रेस सर्विस के सौजन्य से)

आहर द्रव्य

शरीर का वजन घटाएं पत्तागोभी खाएं

डॉ. (श्रीमती) सुनन्दा रानाडे, पुणे

यह पूरे विश्व में खाई जानेवाली बहुत प्रसिद्ध एवम् चिर-परिचित सब्जी है। प्रत्येक व्यक्ति को इस बात से निश्चित ही अवगत होना चाहिये कि यह सब्ज़ी विटामिन "ए" का एक बड़ा भण्डार है। परन्तु इसमें विटामिन "बी" और "सी" भी होता है।

उपयुक्त मात्राओं में यह सब्ज़ी दीपन का कार्य करती है अर्थात् भूख बढ़ाती है तथा पाचक का कार्य करती है अर्थात् सुगमता से भोजन का पाचन करती है। शरीर का वज़न घटाने में इस सब्ज़ी का उपयोग सर्व विदित है। सप्ताह में एक दिन दोपहर तथा रात्रि भोजन न लेकर उसके स्थान पर एक गिलास पातगोभी का रस, टमाटर और गाजर का रस लेना शरीर का वज़न घटाने में सहायक होता है।

ताज़ा पातगोभी का रस ६ औंस, एक चाय का चम्मच भर शहद के साथ दिन में दो बार सेवन करना पेट में गैस वृद्धि एवम् साधारण यकृत विकारों को दूर करने की भी औषधि है।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया में हुए हाल के अनुसन्धानों से यह भी ज्ञात हुआ है कि पातगोभी का रस जठर कैंसर अथवा आमाशय के कैंसर में उपयोगी होता है। ऐसे रोगियों को प्रतिदिन २५० ग्राम ताजा पातगोभी का रस दिन में दो बार तीन माह तक लेना चाहिये। ताजा पातगोभी का रस एक चाय-चम्मच भर शहद के साथ दिन में दो बार लेना, शुष्क एवम् खुजली से पीड़ित त्वचा को ठीक करने में उपयोगी है। इसमें विटामिन "सी" की उपस्थिति के कारण यह मसूड़ों से खून आने जैसी व्याधि को भी दूर करती है।

पात गोभी के रस में विटामिन "ए" भी प्रचुर मात्रा में होने के जिस कारण यह रतौंधी में भी उपयोगी होता है।

शीतल एवम् मूत्र लानेवाला होने के कारण यह ताज़ा रस मूत्र-विकारों जैसे मूत्र-त्याग में जलन आदि में भी उपयोगी है। विटामिन "ए" "बी" और "सी" तथा पोटेशियम की इसमें पर्याप्त मात्रा उपस्थित होने के कारण यह उन मनुष्यों द्वारा भी उपयोग में लाया जा सकता है जो उच्च-रक्तचाप तथा नेफ्राइटिस जैसे मूत्र-रोग से पीड़ित हैं।

चरक-संहिता, जो आयुर्वेद का प्राचीनतम् ग्रन्थ है उसमें भी मूत्र विकारों के उपचार हेतु पातगोभी का प्रयोग बताया गया है। इसका ताज़ा रस ६ औंस की मात्रा में शहद के साथ यदि प्रसूता को शिशु-जन्म के पूर्व होने वाले दर्द (लेबर-पेन) के समय एक घण्टे पहले दे दिया जाये तो शिशु का जन्म सुगमता से हो जायेगा।

यदि पातगोभी को सब्ज़ी माफिक काटकर, उसे पानी में खौलायें और इस उबलते पानी की भाप का बफ़ारा लें तो यह कफ व ठंड कम करने की औषधि साबित होगी। प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान ने विशिष्ट रूप से इस प्रयोग पर बल दिया है और सामान्य सर्दी के उपचार हेतु, इसके वाष्प को साँस के साथ अन्दर खींचना उपयोगी बताया है। पातगोभी का अत्यधिक मात्रा में सेवन, वात दोष प्रबल करता है। इसको दूर करने हेतु पातगोभी में ज़रा सी हींग का छौंक दे देना चाहिये। अतः रोगियों को पातगोभी का सेवन, मर्यादित मात्रा में करना चाहिये।

पातगोभी के व्यंजन

- दो प्लेट कटी हुई पातगोभी में चौथाई कप भुनी हुई मूंगफली का चूरा मिलायें और उतनी ही मात्रा में कसी हुई गरी उसमें डालें। फिर उसमें ३ चाय-चम्मच भर नींबू का रस मिलायें। तत्पश्चात् उसमें नमक एवम् थोड़ी-सी चीनी, स्वाद बढ़ाने हेतु मिलाये। दो हरी मिर्च भी महीन कतर कर इसमें मिला दें। यह सलाद स्वादिष्ट एवम् प्रचुर मात्रा में विटामिनों से युक्त होगा।
- दो प्याले कटी हुई पातगोभी में दो लाल टमाटरों के स्लाइस भी काट दें। इसमें एक कप-भर कटी हुई पालक मिला दें और साथ में एक कप कसी हुई गाजर भी। इन सबको भली प्रकार आपस में मिला लें। फिर इसमें आधा कप भुनी हुई मूंगफली का

शेष पृष्ठ ४३ पर

पत्र-पत्रिकाओं से

जन-जातियों को वनौषधियाँ पसन्द

करीब ४०.३१ प्रतिशत बिहार के छोटा नागपुर और पठारी क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों के करीब ४०.३१ प्रतिशत लोगों को विभिन्न रोगों के इलाज के लिए वनौषधियाँ लेना ज्यादा पसन्द है। यह भी देखा गया है कि भविष्य में भी वे इनका ही प्रयोग करेंगे। इसके लिए लगभग ९१३ घरों का सर्वेक्षण किया गया जिसमें ६२४ घर जनजातियों के थे। उसमें से केवल ०.१७ होमियोपैथी, ५६.६२ एलोपैथी, २.९६ आयुर्वेद और ४०.३ वनौषधियों के पक्ष में थे। इस प्रकार से गरीब जनता ने इनसे अपने रोगों का इलाज करवाना पसन्द किया।

'दि स्टेटमैन' सितम्बर १०, १९९१

आयुर्वेद के लिए तय रकम खर्च न हो पाने की बात सरकार ने मानी

राजस्थान सरकार आयुर्वेदिक अस्पतालों के लिए निर्धारित बजट का एक चौथाई हिस्सा भी खर्च नहीं कर पाई है। इस नाकामी को सरकार ने आज विधान-सभा में मंजूर किया। सत्ता पक्ष की सरकार के मन्त्री ने यह उम्मीद जताई कि इस साल बजट के २५ से ३० फीसदी हिस्से का उपयोग कर लिया जायगा। यह भी कहा गया कि आयुर्वेदिक अधिकारी औषधालयों का निरीक्षण नहीं करते हैं। वैद्यों आदि के वेतन पर अधिक बजट खर्च हो रहा है और दवाइयों पर कम। इन सबसे मरीजों को औषधालयों का पूरा फायदा नहीं मिल पा रहा है।

जनसत्ता, १४ सितम्बर १९९१

सात बच्चों की जान जा चुकी, झुग्गियों में बीमारियाँ फैलीं

दिल्ली की झुग्गी बस्तियों और पुनर्वास कालोनियों में बरसात के बाद बीमारियों का सिलसिला शुरू हो गया है। उल्टी, दस्त, तेज बुखार, खाँसी, वायरल आदि के रोगियों की संख्या लगातार बढ़ रही है। गरीब मेहनतकशों के ये मासूम बच्चे सरकारी अस्पतालों, नीम हकीम डॉक्टरों के सहारे जीवन और मौत की लड़ाई लड़ रहे हैं। स्वास्थ्य सेवा अधिकारियों के अनुसार तालाबों और गड्ढों में बरसात का पानी जमा हो जाता है और सड़ता रहता है। फलस्वरूप मक्खी, मच्छर और दूसरे विषाणु पनपते हैं फिर झुग्गी-बस्तियों में पीने के साफ पानी की बड़ी किल्लत है। इस तरह झुग्गी बस्तियों व पुनर्वास कालोनियों में भी पानी का जमाव, गंदगी, कूड़े के ढेर आदि के कारण मच्छरों व बीमारियों का प्रकोप बढ़ रहा है।

नवभारत टाइम्स, १० सितम्बर १९९१

कैंसर दूर करती है चाय

जापान में किए गए एक अध्ययन के अनुसार हरी चाय में कैंसर निरोधक गुण होते हैं।

हरी पत्ती वाली चाय पीने वाले व्यक्तियों के पेट में कैंसर कम पाया जाता है। चाय केवल इसी कारण लाभप्रद नहीं है बल्कि खास तरह से संसाधित चाय तनाव मुक्ति में भी सहायक होती है। चीन में किए गए प्रयोगों से पता चला है कि टूथपेस्ट में दो प्रतिशत चाय मिला देने से दन्त क्षय की रोकथाम हो सकती है।

लविन्द्र टाइम्स, २८ अगस्त १९९१

मधु संचय

क्या वास्तव में महत्वपूर्ण है चाय?

आज युवा हो या प्रौढ़, स्त्री हो या पुरुष, गरीब हो या अमीर, बीमार हो या स्वस्थ सभी वर्गों के लोग एक दिन में कई बार चाय पीते हैं।

वास्तव में चाय एक मादक द्रव्य है। चाय में टैनिन नामक विष वोलेटाइन होता है जो हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत घातक है। टैनिन नामक विष के सेवन से कब्ज़ हो जाता है, उदर के कई प्रकार के रोग हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त नसों में सूजन, वीर्य पतला हो जाना इत्यादि लक्षण दिखाई देते हैं।

वोलेटाइन द्रव्य में निद्रा को कम कर देने की शक्ति होती है, जिस कारण नेत्रों में कई प्रकार के रोग हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त अधिक चाय पीने से शारीरिक दुर्बलता आ जाती है। मधुमेह नामक रोग की सम्भावना अधिक बन जाती है। हृदय कमजोर हो जाता है। नशे सभी बुरे और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं। अतः चाय का नशा भी बुरा है।

लविन्द्र टाइम्स, सितम्बर ११, १९९१

मधुमेह में उपयोगी केला

मधुमेह रोग से ग्रस्त व्यक्ति यदि केले के रस का सेवन करे तो मधुमेह में लाभ होगा। इसके लिए गले हुए केलों के छिलके उतार कर उन्हें हाथों से मसल कर लुगदी बना लें। फिर उसमें आधा भाग चावल की भूसी मिलाकर २–३ दिन गरम स्थान पर रखें। चौथे दिन किसी पात्र में सबको रखकर पात्र को थोड़ा टेढ़ा करके रहने दें जिससे केले का रस अलग निथर आयेगा। इस रस का सेवन करने से मधुमेह में लाभ होगा।

लविन्द्र टाइम्स, सितम्बर १९९१

पृष्ठ ४१ का शेष

पत्तागोभी ...

चूरा और कसी हुई गरी भी मिलायें। स्वाद–भर नमक व थोड़ी सी चीनी भी डालें। अब चार चाय–चम्मच तेल लेकर उसे गर्म करें। तड़का हेतु कुछ सरसों का तेल भी उसमें डालें तथा हींग व पिसी हल्दी भी। इसमें सलाद को कल्हार कर उतार लें और प्रयोग में लायें। यह सलाद कुपोषण से युक्त दुर्बल बच्चों के लिये उपयोगी है।

पातगोभी के बड़े : चार कप कटी हुई पातगोभी में आधा कप चने अथवा मूँग की दाल का आटा मिलायें उसमें दो चाय–चम्मच पिसी हल्दी और पिसी लालमिर्च मिला लें। नमक स्वाद–भर डालें। कुछ ग्राम हरे धनिये की पत्ती भी काटकर मिला लें। अब इसमें कुछ पानी मिलाकर आटा माफिक माड़ लें। फिर इसे एक थाली में तेल चुपड़ कर बराबर से फैलायें। फिर इसे कुकर में पकाएँ। जब यह ठंडा हो जाये तो इसे छोटे–छोटे बड़ों के आकार में काट लें। फिर इन बड़ों को तेल में तल लें। ये बड़े बच्चे पोषण–मान वाले होते हैं।

अतः पातगोभी जो सामान्यतः पूरे वर्ष भर बाजार में मिलती है यदि भली प्रकार प्रयोग में लायी जाये तो बहुत सी व्याधियों में उपयोगी होगी और मनुष्य को स्वस्थ भी रखेगी।

(अनुवादकर्ता : सुधीर कुमार पालवी, लखनऊ)

भटकटैया के बीज और कैंसर

रामनाथ टण्डन, लखनऊ

हमारे एक सजग पाठक ने अपने मित्रों की सहायता से एक ऐसी समस्या की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है जिसके कारण सहज मुनाफे की लालच की में लाखों व्यक्ति हर वर्ष बीमार पड़ते हैं और दोषी मुनाफाखोर कदाचित ही दण्डित किये जाते हैं। आशा है सरकारी तन्त्र इस ओर उचित ध्यान देगा।

सम्पादक

कुछ समय पहले मित्रों के साथ कुछ गाँवों में जाने का अवसर मिला। हमारे साथ एक डॉक्टर साहब भी थे। यह जानकर कि हमारे बीच एक डॉक्टर भी है कई व्यक्ति अपने को दिखलाने तथा दवा लिखवाने हेतु आ गये। काफी व्यक्ति ग्लाकोमा से पीड़ित थे और कुछ व्यक्तियों के पैर में सूजन थी तथा दस्त भी आते थे। डॉक्टर ने इसके लिये असन्तुलित भोजन तथा गन्दे पानी को ही जिम्मेदार ठहराया। पर लोगों ने इसका प्रतिवाद किया और कहा कि पानी कुएँ का टेस्ट किया हुआ है और भोजन में थोड़े–बहुत वे सभी तत्व होते हैं जिनकी शरीर को दैनिक आवश्यकता होती है। फिर उन्होंने बताया कि जब से स्वरोज़गार योजना के अन्तर्गत सरसों का तेल गाँव में ही पेरा जाकर उपलब्ध होने लगा है तभी से धीरे–धीरे लोगों का स्वास्थ्य गड़बड़ रहने लगा है। पर जो तेल मिल के मालिक हैं वह बहुत सज्जन और धर्मात्मा व्यक्ति माने जाते हैं उनसे मिलावट की कोई आशंका ही नहीं की जा सकती थी। अन्त में उस सरसों के तेल का नमूना लेकर हम लोग घर वापस लौट आये।

करीब डेढ़ महीने बाद बम्बई से डॉक्टर मित्र का पत्र आया कि क्रोमेटोग्राफिक विधि से परीक्षण करने से ज्ञात हुआ कि उस खाद्य तेल में पीला धतूरा (इसे भटकटैया भी कहते हैं) के बीजों के तेल का सम्मिश्रण है और वही सारी व्याधियों की जड़ है। उन्होंने सलाह दी है कि मैं स्वयं जाकर ग्राम वासियों को यह बात बतला दूँ और आगे से शहर से डिब्बे में बन्द एगमार्क सील युक्त तेल लाकर ही इस्तेमाल करने की सलाह दूँ।

डॉक्टर मित्र का पत्र काफी लम्बा था उसका सारांश निम्निलिखित है–

पीला धतूरा जंगली तौर पर उगने वाला "पॉपी" की प्रजातियों में से एक है। धतूरे का नाम ही विष का द्योतक है तो फिर इसके बीज तो स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होने ही हैं। अनुसन्धान से यह ज्ञात हुआ है कि इसके बीजों का तेल ग्लॉकोमा (आँख की बीमारी) हृदय रोग, कैंसर आदि भयंकर व्याधियों को जन्म दे सकता है। इसमें पाये जाने वाले एक अल्कलॉयड संग्विनैरीन का कुछ चूहों पर प्रयोग किया तो उनमें ग्लॉकोमा और कैंसर पैदा हो गया। उन्होंने लिखा कि मालूम होता है कि धतूरे के बीजों का तेल सरसों के तेल के साथ मिलाकर बेचा गया है।

डॉक्टर का कहना था कि आँत का कैंसर भी पॉपी या धतूरे के बीज मिले खाद्य तेलों को खाने से होता है। चाहे वह मूँगफली का तेल हो, तिल का तेल हो या फिर वनस्पति में ही मिलाया गया हो। दक्षिण में इसे ब्रह्मदण्डी, बंगाल में कटका, गुजरात में सत्यानाशी, उत्तर प्रदेश में भटकटैया आदि नामों से भी जाना जाता है। कहा जाता है कि १९७६ में अहमदाबाद में इसी प्रकार कुछ बीमारियाँ संक्रामक रूप में फैलीं तो बम्बई व अहमदाबाद में खुले तेल बेचने वालों से नमूने एकत्र किये गये तो पाया गया कि पीले धतूरे तथा पॉपी की जातियों के बीजों का तेल खाद्य तेलों में मिला हुआ था।

कहा जाता है कि खाने के तेल में अगर १ प्रतिशत भी इस तेल को मिला दिया जाय तो पैरों में सूजन आ सकती है। उल्टियाँ भी हो सकती हैं। ५ से १० प्रतिशत मिलाने पर दिल फैल सकता है और साँस लेने में तकलीफ मालूम होगी। बराबर इस्तेमाल करने वालों को ग्लॉकोमा तो अवश्य ही हो जाता है। इसके इस्तेमाल से तुरन्त कोई कुप्रभाव नहीं जान पड़ता है। यह ज़हर धीमे–धीमे असर करता है और व्यक्ति को

समझ में नहीं आता कि किस कारण ऐसा हो रहा है और अन्त में इलाज बड़ा पेचीदा हो जाता है।

गुजरात में ग्रासिका (खाने की नली) के कैंसर से अधिकतर लोग वृद्धावस्था के नज़दीक पहुँचते-पहुँचते ग्रसित हो जाते हैं। गुजराती समाज यूँ भी तेल का अधिक प्रयोग करता है। वहाँ यह पौधा पीला धतूरा ग्रामों में जंगली तौर पर बेहद बहुतायत से उगता है और अक्सर लड़कों को इनके बीज इकट्ठा करने को कहा जाता है। इसके अतिरिक्त जो पक्षी इनके बीजों को चुगते अथवा जो भेड़ें, गायें, बकरियाँ इन मनोहारी पीले फूलों वाले कटीले पौधों को खाते हैं उनके दूध, यकृत, मांस, अण्डे आदि भी इसके विष से प्रभावित हो जाते हैं। मानव शरीर का यकृत संग्विनैरीन को बेंज (सी) एक्रीडीन में परवर्तित कर देता है जो कैंसर पैदा करने वाले खतरनाक रसायन का अमिथाइलीकृत रूप होता है।

इस तेल का विष शरीर में जमा होता रहता है, स्वेद, मूत्र तथा मल द्वारा निष्कासित नहीं होता है और अन्त में अल्पायु में ही मानव को मृत्यु के मुख में धकेल देता है।

अतः यह उचित ही होगा कि जनता का ध्यान इसके प्रति आकर्षित किया जाय ओर ग्राम वासियों को सलाह दी जाए कि वीरान जमीनों पर उगे इसके पौधों को जहाँ कहीं भी देखें उखाड़ कर जला डालें या सड़ा डालें।

हमारी सरकार को इसके बारे में हमारे वैज्ञानिकों ने अवश्य ही बतला दिया होगा। पर ऐसा मालूम होता है कि सरकार ने इस जानकारी को गम्भीरता से नहीं लिया क्योंकि देहातों में अभी भी मेड़ों पर, बंजर बलुई जमीन पर जिसको किसान काम में नहीं लाते हैं काफी प्रचुरता से यह उगता है और इसके बीज भी इकट्ठे किये जाते हैं। अगर २४ रुपये किलो वाली सरसों में एक या दो रुपये किलो वाले बीज मिला दिये जायें तो मुनाफा ही मुनाफा है, यद्यपि उसकी कीमत उपभोक्ता अकाल मृत्यु द्वारा ही चुकाता है।

अमोघ ग्रामोद्योग सेवा समिति

बीर, हथौधा, जि. बाराबंकी (उ.प्र.)

की

उ. प्र. खादी ग्रामोद्योग द्वारा प्रमाणित

स्वास्थ्यवर्द्धक वनौषधियाँ

उदरामृत योग : त्रिफला, वंशलोचन, मौलेठी, दालचीनी, पीपल, सफेद-मूसल, वायविडंग, असगन्ध, शतावर, बेल आदि से निर्मित यह वायुविकार, कब्ज़, पेचिस, नजला खाँसी, कोलाइटिस, यकृत दोष रक्त विकार, धातुक्षीणता, ज्वर को समूल नष्ट कर स्वास्थ्य बढ़ाता है।

१००० ग्राम मूल्य ६०.०० रु. ५०० ग्राम मूल्य ३५.०० रु.

बजरंग पाक : असगन्ध, कौंच के बीज, शतावर, सफेद मूसली, बिदारीकन्द, कालीमूसली, सालमिश्री, नागकेशर, पिपरामूल, केसर, शिलाजित, बंगभस्म, मधु, मुनक्का, त्रिफला आदि से निर्मित यह वीर्य को स्थिरकर पुरुष्तव को बढ़ाता है, नपुन्सकता, धातुक्षीणता, स्वप्नदोष, शीघ्रपतन, जोड़ों के दर्द को समाप्त कर शरीर को नव स्फूर्ति एवं ओजस्विता से परिपूर्ण करता है।

५०० ग्राम मूल्य १०५.०० रु. ३०० ग्राम मूल्य ७५.०० रु.

अमोघ नारी जीवन : शतावर, पठानीलोघ, अशोकाछाल, मेथी, धनिया, गाजरबीज, दशमूल, त्रिफला आदि से तैयार यह श्वेत प्रदर, रक्त प्रदर, अनियमित मासिक धर्म, शारीरिक पीड़ा, हाथ पैरों में जलन, प्रसूत ज्वर, आलस्य को समाप्त कर गर्भावस्था एवं प्रसवोपरान्त विशेष लाभकारी।

१००० ग्राम मूल्य ६०.०० रु. ५०० ग्राम मूल्य ३५.०० रु.

सावित्रि आयुर्वेदिक चाय : अतीस, भारगी गुलबनफ्सा, आख्सा, गूच, तुलसी, तेजपत्र, जावित्री, जायफल, सौंफ, कालीमिर्च, दालचीनी, मौलेठी, सौंठ आदि तकलीफें दूर होती है इसके प्रयोग से नेत्र ज्योति में स्वमेव वृद्धि, चाय पीने की आदत का परित्याग करने में कष्ट नहीं होता एवं ज्वर भी समाप्त हो जाता है।

१०० ग्राम मूल्य १०.०० २५० ग्राम मूल्य २२.०० रु.

प्रधान कार्यालय : मटियारी चौराहा, आकाशवाणी के सामने, फैजाबाद रोड, चिनहट, लखनऊ।

भूताग्नि

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे, लखनऊ

शरीर पंचमहाभूतों से निर्मित है। शरीर के संरक्षण और वृद्धि के लिए पंचमहाभूत आवश्यक हैं। ये धूप, हवा, और मुख्यतया आहार के रूप में उपलब्ध होते हैं। प्रत्येक आहारयोग्य पदार्थ पंचमहाभूतों का संघटित रूप होता है। परन्तु उनमें अनुपात भिन्न-भिन्न होता है। जिस आहार में जिस महाभूत की प्रधानता होती है, वह तत्सम्बन्धी गुणधर्म वाले अंग की पुष्टि और अनुरक्षण करता है।

आहार द्रव्यों में जो देह के अस्थि, मांस आदि ठोस धातुओं के अंश बनकर उन्हें पुष्ट करते हैं, वे मूलतः पार्थिव द्रव्य कहलाते हैं। इनमें गेहूँ, चना, मटर, माष आदि दालें, सूखे मेवे और फल, आमिष आदि आते हैं। पार्थिव द्रव्यों में ऐसे द्रव्य भी समाविष्ट हैं जो ईंधन के रूप में देहाग्नि को प्रज्जवलित रखते हैं।

आहार द्रव्यों में जो रस, रक्त, मेद, शुक्र, स्वेद, मूत्र, क्लेद, श्लेष्मा आदि को पुष्ट करते हैं, वे आप्य वर्ग में आते हैं। इन पदार्थों में दूध, फलों का रस, पानी, तेल आदि प्रमुख हैं।

आग्नेय आहार द्रव्यों का कार्य देहाग्नि को दीप्त रखना, पित्तोष्मा उत्पन्न करना तथा ऊर्जा बढ़ाना है। आग्नेय आहार द्रव्यों में सामान्यतया लहसुन, राई, मेथी, जीरा, शुण्ठी, कालीमिर्च, पीपल, गन्धक और उष्णवीर्य खनिज यथा ताम्र, वंग, सुवर्ण तथा आसव, सुरा, अम्ल, क्षार आदि द्रव्य आते हैं। इन द्रव्यों से शरीर के आग्नेय अंश की पुष्टि होती है।

आहार द्रव्यों में से जो लघुता, स्फूर्ति और गतिशीलता या क्रियाशीलता उत्पन्न करते हैं, वे वायवीय आहार द्रव्य हैं। सक्रियता इनका महत्वपूर्ण गुण है। चंचलता और रूप परिवर्तन इनका स्वभाव है। इनमें धारोष्ण दूध, मक्खन, शाक, फल, मछली, विविध स्नेह, स्वच्छ वायु आदि परिगणित हैं।

नाभस आहार द्रव्य सूक्ष्मता, लघुता और सुषिरता (रंध्रयुक्तता) उत्पन्न करते हैं। स्थूल उदाहरण के रूप में खीलें, मुरमुरे एवं कतिपय फल इस श्रेणी में आते हैं।

इन समस्त पंचमहाभूतात्मक आहार द्रव्यों का पाचकाग्नि के द्वारा पचन होने के उपरान्त विशेषकर कोष्ठ में भूताग्नियों द्वारा इनका पचन होता है और भूताग्नियों द्वारा पचन होने पर ही इन आहार पदार्थों में अपने महाभूत से सम्बन्धित विशिष्ट गुण उत्पन्न होते हैं जो उन्हें शरीर द्वारा ग्रहण करने योग्य बनाते हैं। गेहूँ, चना या इसी प्रकार के सभी अन्य खाद्य पदार्थ वानस्पतिक, जान्तव या खनिज रूपी होने के कारण मनुष्य के शरीर के लिए विजातीय होते हैं। भूताग्नि इन द्रव्यों का पचन कर इन्हें मानव शरीर के लिए सजातीय, अनुरूप, अनुकूल और सहधर्मी बनाती है। भूताग्नि द्वारा पचनोपरान्त ही शरीर के अंग उन्हें ग्रहण कर सकते हैं और शरीर के विभिन्न अंगों की पुष्टि और परिरक्षण की प्रक्रिया चलती है। आहार द्रव्यों में "आत्मीयता" उत्पन्न करना भूताग्नि का मुख्य प्रयोजन है।

(क्रमशः)

जीवनीय में प्रस्तावित परिवर्तन

यह तो सर्वविदित है कि पिछले दिनों में कागज, निगेटिव व छपाई आदि के मूल्यों में बेतहाशा वृद्धि हुई है। इस तेजी के बावजूद हमने जीवनीय के कलेवर, छपाई व पठन-सामग्री को लगातार और अधिक आकर्षक, ज्ञानवर्द्धक एवं उपयोगी बनाने का प्रयास किया है। सम्पादक मण्डल ने यह भी निर्णय लिया है कि अगले वर्ष के प्रथम अंक (शिशिर, जनवरी १९९२) से जीवनीय और भी अधिक सुन्दर एवं बड़े आकार में आपके समक्ष प्रस्तुत हो।

ऐसी दशा में स्वाभाविक है कि जीवनीय के मूल्य व वार्षिक चन्दे में भी वृद्धि अपरिहार्य होगी। पाठकों की माँग पेर जीवनीय में प्रस्तावित यह परिवर्तन आशा है सभी सराहेंगे और बढ़ी हुई दरों के बावजूद जीवनीय आपकी व आपकी परिवार की पसन्द की प्रमुख पत्रिका बनी रहेगी।

सम्पादक

लोस्वापसंस समाचार

कामला पर राष्ट्रीय सम्मेलन

"लोक स्वास्थ्य परंपरा संवर्धन समिति" के लखनऊ स्थित उत्तर भारतीय केन्द्र के तत्वाधान में युवा वैज्ञानिकों की अकादमी के स्वास्थ्य नीति समूह ने केन्द्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान के सहयोग से कामला के उपचार पर एक राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन १४–१५ सितम्बर ९१ को लखनऊ में किया। इस सम्मेलन में देश भर में प्रचलित विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों के विशेषज्ञों ने अपनी–अपनी पद्धति के अनुसार कामला रोग के कारणों की समझ के साथ उसके निदान, उपचार व पथ्यापथ्य आदि का विस्तृत विवेचन किया। सम्मेलन में यकृत की कार्य–प्रणाली से लेकर उसमें उत्पन्न दोषों के फलस्वरूप होने वाले रोगों के सन्दर्भ में कामला पर हुए शोध कार्यों की भी विस्तृत समीक्षा की गई।

सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए "अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान दिल्ली" के भूतपूर्व संकाय अध्यक्ष एवं अन्तर्राष्ट्रीय यकृत रोग संगठन के मनोनीत अध्यक्ष प्रो. बद्रीनाथ टण्डन ने कहा कि चूँकि पीलिया रोग नहीं किसी रोग का लक्षण है अतः मूल व्याधि का पता लगाने का विशेष प्रयास आवश्यक है। यद्यपि यकृत के रोगों पर पर्याप्त शोध कार्य नहीं हुए हैं पर जो जानकारी उपलब्ध है उसका भी सही उपयोग नहीं हो रहा है। उन्होंने इस बात पर दुःख व्यक्त किया कि आज स्वास्थ्य सेवाओं का इतना व्यवसायीकरण हो गया है कि चिकित्सक केवल दवाओं के विक्रेताओं से प्राप्त जानकारी के आधार पर मरीजों को दवाएँ देने लगे हैं, यह भी बिना जाने कि वे दवाएँ कितनी उपयोगी हैं। हाल ही में कानपुर में पीलिया की महामारी के दौरान कई चिकित्सकों ने एक ब्रांड की दवा इसी तरह मरीजों को दी जिससे उस कम्पनी की लगभग १ करोड़ रू. की दवा वहाँ बिकी। डॉ. टण्डन के अनुसार देशी चिकित्सा पद्धतियों में पीलिया के लिए उपयोगी कई औषधियाँ हैं पर आधुनिक अनुसंधान से उनके विश्व–व्यापी उपयोग की प्रामाणिकता सिद्ध करने की आवश्यकता है।

सम्मेलन के उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता करते हुए विश्व–विख्यात वैद्य बृहस्पतिदेव त्रिगुण ने कहा कि आयुर्वेद के अनुसार कामला की विभिन्न अवस्थाओं मे उनके रोकथाम व उपचार की विस्तृत व्याख्या उपलब्ध है, जिसके अनुसार आज भी लाखों लोग लाभ उठा रहे हैं तथा इनकी औषधियों का निर्यात भी विश्व भर में हो रहा है। उन्होंने खेद व्यक्त किया कि यद्यपि आयुर्वेद व अन्य देशी चिकित्सा पद्धतियों की दुनिया भर में माँग बढ़ रही है, हमारे देश के नीति निर्धारक इस ओर समुचित ध्यान नहीं दे रहे हैं और इन पद्धतियों के विकास के लिए स्वास्थ्य सेवाओं का मात्र ५ प्रतिशत बजट देकर इनकी लगातार उपेक्षा की जा रही है। "केन्द्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान" के निदेशक प्रो. भोलानाथ धवन ने इस दिशा में किये जा रहे अनुसंधान का ब्यौरा देते हुए असन्तोष व्यक्त किया कि इस विषय के महत्व के बावजूद इस पर समुचित शोध नहीं हो रहा है। उन्होंने देशी चिकित्सा शास्त्रियों से आग्रह किया कि कामला की विभिन्न अवस्थाओं में लाभकारी कुछ वनौषधियों की लिस्ट तैयार करें जिन पर यदि आवश्यक हो तो अनुसंधान की दिशा व रूपरेखा निर्धारित की जाए।

सम्मेलन में एक प्रमुख भाषण देते हुए बम्बई के डॉ. अशोक वैद्य ने कहा कि देशी चिकित्सा पद्धतियों को समझने के लिए आधुनिक वैज्ञानिकों को अपना अहं त्याग कर देशी चिकित्सकों के मूल सिद्धांतों के अनुसार ही इन पद्धतियों के ज्ञान को समझना चाहिये, तभी उस पर शोध की

शेष पृष्ठ ४९ पर

पृष्ठ २३ का शेष

दन्तस्वास्थ्य...

दातून के लिए उत्तम वृक्ष

करंज, कनेर, आक, मालती, अर्जुन, खदिर, मौलसिरी।

दाँतों के लिए लाभदायक वनौषधियाँ : त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आँवला), त्रिकटु (सोंठ, पीपल, कालीमिर्च), त्रिजात (दालचीनी, इलायची, तेजपत्ता)।

लाभदायक अन्य पदार्थ : सरसों का तेल, शहद, नमक (सैंधा नमक) हरीमिर्च, करेला आदि।

दाँतों के लिए लाभकारी लोकौषधि

त्रिफला, त्रिकुटा तृतिया पाँचों लवण पतंग।
दाँत वज्र सम होत हैं माजूफल के संग।।

कुल्ला करना : दातून या ब्रश करने के बाद, जीभ में जमे मैल को निकालना चाहिये, इसके लिए जीभी का प्रयोग (जो सोना, चाँदी, ताँबा या पीतल की हो) करना चाहिये। जीभी द्वारा साफ करने से मुख की बदबू दूर होती है, भोजन में स्वाद आता है व दाँतों को भी लाभ मिलता है।

जीभी करने तथा खाना खाने के बाद कुल्ला अवश्य करना चाहिये। कुल्ला करने से जबड़े बलवान् होते हैं। आवाज़ (स्वर) साफ और तेज होती है। भोजन में रुचि बढ़ती है व स्वाद का पता चलता है।

दाँतों को स्वस्थ रखने सम्बन्धी नियम

- नवजात शिशु को स्तनपान अवश्य करायें क्योंकि इससे उसके मसूड़ों का व्यायाम हो जाता है जो दाँत निकलते समय लाभदायक होता है।
- बच्चों को टॉफी, चॉकलेट की आदत न डालें।
- बच्चे अंगूठा या अंगुली को मुख में रखकर न चूसें। ऐसा करने से दाँत बाहर निकलने लगते हैं तथा ओठों को भींचने की आदत नहीं होनी चाहिये।
- भोजन को चबा-चबा कर खाएँ, इससे दाँतों व मसूड़ों का व्यायाम होता है तथा भोजन में स्वाद अधिक आता है।
- ज्यादा ठंडे व गरम खाद्य-पदार्थ दाँतों के लिये हानिकारक हैं।
- मिठाई खाने के बाद दाँत अवश्य साफ करें।
- तम्बाकू, पान, बीड़ी-सिगरेट, पान पराग का अति सेवन दाँतों के लिए नुकसानदायक है।
- रेशेदार फल (सेब, अमरूद, नारियल, आम आदि) व सब्जी (मूली, गाजर, प्याज़, चुकन्दर आदि) कुछ न कुछ प्रतिदिन अवश्य लें क्योंकि इससे स्वभावतः दाँतों की सफाई होती है व दाँत मजबूत होते हैं।
- ब्रश को पानी की तेज़ धार में धोकर उचित जगह पर रखें, व ब्रश करने से पहले उसको धोकर ही प्रयोग करें। यदि ब्रश के सिरे मुड़ने लगें तो ब्रश बदल देना चाहिये।
- यदि हो सके तो ब्रश या दातून शीशे के सामने करें ताकि दाँतों की सफाई का पता चल सके।

विशेष : छुट्टी के दिन दातून (नीम या मौलसिरी) अवश्य करें।

सरसों के शुद्ध तेल में सेंधा नमक मिलाकर उससे दाँत साफ करना लाभदायक है।

लेखकों के लिए

जीवनीय में हम प्राथमिक स्वास्थ्य, रोजमर्रा की बीमारियों व घरेलू उपायों द्वारा उनकी लाभदायक चिकित्सा की जानकारी से संबंधित लेखों को छापते हैं। अतः इस विषय पर लेखों का स्वागत है। कृपया अपने लेखों को टाइप कराकर अथवा साफ अक्षरों में हाथ से लिखकर मूल प्रति ही भेजें। लेख के साथ अपना पता लिखा हुआ एक लिफाफा भी भेजें जिस पर उचित मूल्य का टिकट लगा हो ताकि न छपने वाले लेखों को वापिस भेजा जा सकें। हम उन्हीं लेखों को छापते हैं जो हमारे संपादक मंडल द्वारा मान्य होते हैं।

यह कोई जरूरी नहीं है कि हम सिर्फ वैद्यों हकीमों, डाक्टरों आदि के ही लेख छापें वरन हम प्रचलित स्वास्थ्य लोकोक्तियां एवं उन व्यक्तियों के भी अनुभव आमंत्रित करते हैं जिन्होंने किसी भी औषध या आहार द्रव्य का सफल प्रयोग किया हो।

– संपादक

पता : जीवनीय, ई – III/ २५०, सेक्टर–एच
अलीगंज, लखनऊ – २२६०२० (उ.प्र.)

पुस्तक समीक्षा

ए हैण्डबुक ऑफ आयुर्वेद

लेखक *वैद्य भगवान दास और आचार्य मेनफ्रेड एम. जूनियस*
प्रकाशक *नौरंग, कांसेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली – भारत*
पृष्ठ २२१
मूल्य रु. ९०–००
द्वितीय संस्करण *दिल्ली – १९८८*

अपनी इस पुस्तक में लेखकों ने आयुर्वेद के सामान्य विषयों के बारे में जानकारी देते हुए गागर में सागर भरने का प्रयास किया है। पुस्तक चार अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में लेखक ने आयुर्वेद की परिभाषा, उसकी प्रकृति, उसकी विशिष्टियाँ, उद्देश्य, आयुर्वेद के अष्टांग, संक्षेप में आयुर्वेद का इतिहास, आयुर्वेद की दार्शनिक पृष्ठभूमि, त्रिदोष, धातु, मल, अग्नि आदि विषयों पर पर्याप्त जानकारी दी है। दूसरे अध्याय में नाड़ी परीक्षण, निदान, लक्षण तथा रोगों का उपचार और औषधियों के प्रकारों के बारे में जानकारी दी है। तीसरे अध्याय में चालीस बहु–प्रचलित औषधियों के बारे में विवरण एवं चित्र भी दिये गये हैं। चौथे अध्याय में लेखकों ने कुछ रोग विशेषों का विवरण देते हुए उनकी चिकित्सा भी बतायी है।

रोगों की जानकारी हेतु मनुष्य के प्राकृतिक संवेगों के बारे में भी संक्षेप में अच्छी जानकारी दी गयी है। आयुर्वेद की दार्शनिक तथा वैज्ञानिक पृष्ठभूमि के विवरण को देखते हुए लेखकों ने परमाणुओं की संरचना पर भी पंच–महाभूतों की दृष्टि से जानकारी देने का प्रयास किया है, जो आज के वैज्ञानिक ज्ञान के दृष्टिगत विवादास्पद प्रतीत होता है।

संक्षेप में यह पुस्तक आयुर्वेद का अध्ययन करने वालों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। इसके पठन से आयुर्वेद के सम्बन्ध में कुछ विशिष्ट मौलिक जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

पृष्ठ ४७ का शेष

कामला पर राष्ट्रीय गोष्ठी ...

दिशा भी स्पष्ट हो सकेगी। कामला के मरीजों के ज्ञान और अभिमत पर किए गए एक सर्वेक्षण में डॉ. ओ.पी. अस्थाना की टीम ने यह पाया कि लखनऊ और उसके आस–पास की अधिकांश जनसंख्या आज भी कामला के उपचारों के लिए देशी चिकित्सा पद्धतियों पर ही निर्भर करती है। आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध, होम्योपैथी व आधुनिक चिकित्सा के विशेषज्ञों ने अपने शोध–पत्रों और चर्चाओं के बाद निम्नलिखित महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले –

– देशी चिकित्सा पद्धतियों में कामला का काफी विस्तृत ज्ञान उपलब्ध है जिस पर आधारित रोकथाम, उपचार आदि से सम्बन्धित ज्ञान को उपयोग में लाया जाना चाहिये।

– कामला के देशी उपचार को उन पद्धतियों के मौलिक सिद्धांतों के अनुरूप ही बढ़ावा देने पर उनका लाभ उठाया जा सकता है।

– देशी चिकित्सा पद्धतियों पर अध्ययन और शोध उनके मौलिक सिद्धांतों के अनुरूप ही होने चाहियें न कि केवल आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के ही मापदण्डों के अनुसार।

– यद्यपि देशी चिकित्सा पद्धतियों के वैज्ञानिकों ने कई चिकित्सकीय परीक्षणों का ब्यौरा प्रस्तुत किया उनमें से अधिकांश मात्र चिकित्सकीय अनुभव थे जिनके साथ–साथ आधुनिक चिकित्सा पद्धति के परीक्षण भी किए गए थे। यदि आधुनिक जाँचों के साथ चिकित्सीय परीक्षण (क्लिलिकल ट्रायल्स) करने हैं तो वे आधुनिक विज्ञान की रूपरेखा के अनुसार ही होने चाहियें।

गोष्ठी के मत में प्रस्तुत औषधियों, उपचारों को तीन स्तर पर बाँटा जा सकता है (क) सर्वमान्य औषध–उपचार जिनके तत्काल उपयोग के प्रबन्ध होने चाहियें। (ख) ऐसे औषध–उपचार जिन पर उपलब्ध जानकारी के अनुसार मतैक्य न होने के कारण उन पर चिकित्सकीय परीक्षणों की आवश्यकता है व (ग) ऐसे विषय जिन पर मूलभूत परीक्षण, शोध की आवश्यक़ता है। गोष्ठी में निर्णय लिया गया कि उपरोक्त मतानुसार ठोस कार्यक्रम बनाए जाएँ जिनको कार्यान्वित करने के लिए सम्बद्ध व्यक्तियों, संगठनों से शीघ्र सम्पर्क करके उपलब्ध ज्ञान का लाभ जन–जन तक पहुँचाया जाए।

शब्द कोश

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे, लखनऊ

अपक्वाहार – बिना पकाया हुआ खाना, यथा हरी सब्ज़ी, फल, अनाज आदि।

अपस्मार – रोग, जिसमें स्मृति नष्ट हो जाती है।

ग्रसनी शोथ – गले में स्थित खाने की नली में सूजन।

जठर शूल – पेट का दर्द।

रक्तमोक्षण/रक्तनिर्हरण – शरीर से खून निकालना।

वर्ण्य – शरीर का रंग निखारनेवाला।

विष्टम्भी – मलादि का निस्सारण रोकनेवाला।

श्वसनी शोथ – साँस लेने की नली में सूजन।

सुरभित – सुगन्धित।

स्कर्वी – खाद्योज (विटामिन सी) की कमी से होने वाला रोग, जिसमें खून के लाल कणों में कमी आ जाती है, मसूड़े फूल जाते हैं या पिण्डलियों और पेट के स्नायु कड़े पड़ जाते हैं।

स्वेदन कर्म – पसीना निकालने की क्रिया।

डॉ. जैन्स स्पेशल हर्बस्

(वनौषधियाँ और नैसर्गिक सुगंधी तेल निर्यात करने वाली मान्यवर कंपनी)

सौंदर्यवधर्न और स्वास्थ्य के लिए शुद्ध और उच्च प्रतीकी वनौषधियाँ मुलायम और निर्जंमुक पावडर स्वरूप में उपलब्ध हैं।

- अडूसा, कुमारी, गोखरमुंडी, आमला, अर्जुन, असगंध, बबूल, ब्राह्मी, बावची, चंदन, संमाछाल, अनारछाल, गुडमार, जिनसेंग, अंबाहल्दी, जवाकुसुम, मुलेठी, कपूरकचरी, खैरछाल, खस, लोध्र, भृंगराज, मजीढ, नीम, नागरमोथा, पपया, रीठा, गुलाब, शतावर, शिकाकाई, सोनामुखी, तुलसी, त्रिफला, बायबिडंग, जामुन, रक्तचंदन, विजयसार
- नैसर्गिक और ॲरोमाथेरेपी तेल – बादाम, नींबू, संमा, चंपा, गुलाब, चमेली, निलगिरी, ज्युनिपर, लवेंडर, पचौली, मालकांगनी, बावची, चौलमुग्रा इ.
- वनौषधियों का इस्तेमाल और फॉम्युली इनके बारे में दो पुस्तिका उपलब्ध हैं। (म. ऑ. रु. २०/–)

संपर्क : डॉ. जैन्स स्पेशल हर्बस्, ए ९० राज कॉमप्लेक्स, मिलिटरी रोड, मरोल, अंधेरी (पूर्व) बंबई ४०० ०५१
टेलीफोन ६४२८६८७, ६३७०४४१
टेलेक्स ०११ ७८२३२ JAIN IN

अन्य राज्यों में एजेंटस् नियुक्त करने हैं।

मरहम–पट्टी तेल

वैद्य संजय आर. डाखोरे, कशेले

आवश्यक औषधियाँ

१– भल्लातक (सेमीकार्पस ऐनाकार्डियम्) १०० ग्राम

२– लहसुन (ऐलियम सेटाइवम्) १०० ग्राम

३– अजवायन (ट्रेकीस्पर्मम राक्सबर्गी) १०० ग्राम

४– प्याज (ऐलियम सेपा) १०० ग्राम

५– तिल का तेल (सिसेमम इंडिकम) ८०० ग्राम

उपकरण एवं सामग्री

१– स्टेनलेस स्टील अथवा कलईदार पीतल का एक चौड़े मुँह का पात्र,

२– तेल निर्माण के समय सामग्री को मिलाने और चलाने के लिए लम्बे हत्थेवाला मजबूत चपटा चम्मच,

३– छानने के लिए स्वच्छ वस्त्र,

४– खरल और घोंटनी।

तेल के साथ औषधियों को उबालने की प्रक्रिया द्वारा उन औषधियों के वांछित गुण तेल में आ जाते हैं। इस प्रकार तैयार तेल में उन सभी औषधियों के गुण आ जाते हैं।

निर्माण विधि

भल्लातक (भिलावा) के छोटे–छोटे टुकड़े कर लें। उन्हें काटने से पहले हाथों में नारियल का तेल चुपड़ लें। लहसुन, प्याज और अजवायन को पानी के साथ पीसकर पीठी बना लें। तेल, भिलावे के टुकड़े और पीठी को पात्र में ले लें। पात्र को मध्यम आँच पर चढ़ा दें। सामग्री को चपटे चम्मच से बराबर चलाते रहें। उबलते मिश्रण में पानी की मात्रा ज्यों–ज्यों कम होती है उबलने की आवाज में त्यों–त्यों कमी आती जाती है। जब सारा पानी भाप बनकर उड़ जाए तो पात्र को नीचे उतार लें।

जब तेल ठंडा हो जाय तब एकत्र करें क्योंकि यह तेल कमरे के ताप पर जमता नहीं। तलछट को भी कपड़े में कसकर छान लेते हैं जिससे उसमें रचा–बसा तेल भी निकल आये।

सावधानी : तेल के उबलते समय उसके भाप के स्पर्श से बचें। यदि यह भाप शरीर में लग जाय तो फफोले पड़ सकते हैं। यदि ऐसे फफोले पड़ ही जायें तो उन पर धनिये की पत्तियाँ पीसकर लगा लें और धनिये का सेवन भी करें।

संग्रह : संकरे मुँह वाली बोतलों में तेल एकत्र करें।

क्रिया और उपयोग

इसे केवल लगाया जा सकता है। यह जीवाणुनाशक और प्रतिरोधी है। यह घावों को भरता है और घाव के क्षेत्र में ऊतकों के निर्माण में सहायक होता है।

यह तेल क्षोभक नहीं है। घाव पर लगाने से दर्द या चुनचुनाहट नहीं पैदा करता।

अनुभव : पिछले ४ वर्षों से 'एकेडमी ऑफ डेवलपमेन्ट साइंस आयुर्वेदिक औषधालय' में हम इस तेल से मरहम–पट्टी करते आ रहे हैं। आज तक किसी ने इस तेल के लगाने से मवाद बनने की शिकायत नहीं की।

स्वर्णिम अवसर : पुरानी दरों पर जीवनीय

१५ जनवरी से जीवनीय के कलेवर व आकार में वृद्धि के साथ ही उसके मूल्यों में भी वृद्धि की जा रही है। चूंकी हम जीवनीय की गुणवत्ता, मौलिकता एवं उपयोगिता में कोई कमी नहीं होने देना चाहते हैं अतः हमें आशा है कि हमारे पाठक इस गुणात्मक परिवर्तन के साथ अपना सहयोग हमें बराबर देते रहेंगे। कुछ घाटे के बावजूद भी हम अपने नियमित पाठकों को जीवनीय पुरानी दरों पर उपलब्ध कराने को बचनबद्ध हैं बशर्ते कि वे अपना चन्दा १५ जनवरी से पूर्व भेजने का प्रयास करें। ध्यान रहे कि चन्दे की निम्नलिखित दरें केवल १५ जनवरी तक प्रभावी रहेंगी।

वार्षिक	३०
द्वैवार्षिक	५५
त्रैवार्षिक	८०
आजीवन	३५०

मस्तरामजी

कथा : पं० काशीनाथ गोरे
चित्र : सन्दीप सेन

मस्तरामजी का इकलौता पुत्र सलिल काफी लाड़-प्यार में पल रहा था.

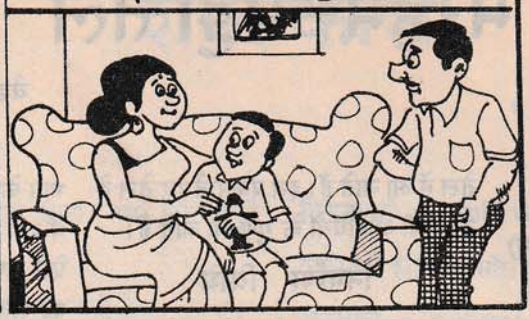

सलिल को दही बहुत अच्छा लगता था.

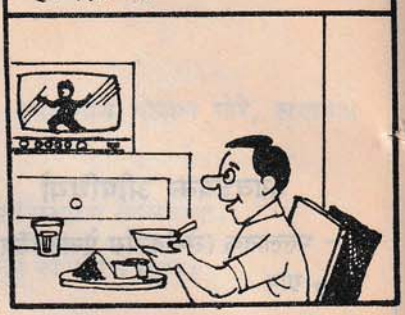

माँ ! मैं दही के बिना खाना नहीं खाऊंगा !

.. और नाश्ते के साथ भी मुझे दही चाहिए.

डीक है !

मैं रात का खाना भी नहीं खाऊंगा .. यदि तुमने दही न दिया तो ..

मस्तरामजी और उनकी पत्नी अपने बेटे की जिद के आगे झुक जाते थे.

अधिक और रात में भी दही खाने से सलिल बीमार रहने लगा.

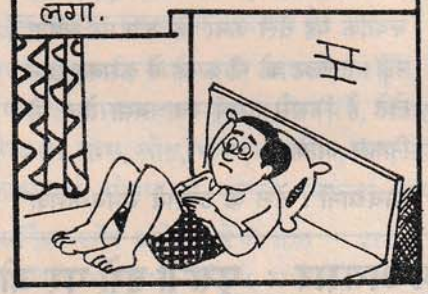

उसे जुकाम और खाँसी हो गई.

.. हलका बुखार भी रहता.

पापा, मुझे बुखार है.

..दवा से फायदा होता परन्तु पुनः दही खाते रहने से वह बार-बार अस्वस्थ होने लगा.

सलिल अब बहुत कमजोर हो गया.. और उसकी हड्डियाँ निकल आई.

..उसे बराबर खाँसी आने लगी.

और थोड़े ही दिन में सलिल ने खटिया पकड़ ली.

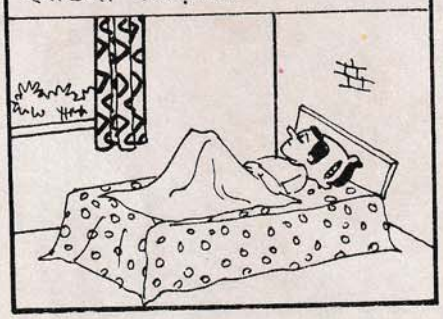

मस्तराम जी ने वैद्य का इलाज किया.

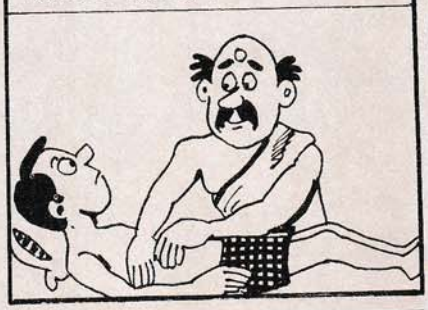

फायदा न होने पर होम्योपैथी का इलाज किया.

ऐलोपैथी के डाक्टरों से इलाज किया.

फायदा न होने पर गंडे-तावीज बंधवाए.

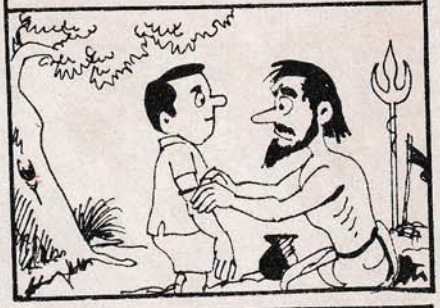

ओझा से झाड़-फूंक कराया..

..ज्योतिषीजी को कुंडली दिखाई..

उन्होंने सलाह दी -

फिर भी सलिल की अस्वस्थता बनी रही.

सलिल अस्वस्थ होने पर भी दही का यथेच्छ सेवन करता रहा.

रजिस्ट्रेशन न. ५११०३/९०

ENJOY HEALTH
READ
Jeevaniya
Health Care Magazine

हर मौसम में स्वस्थ
रहने के लिए
नियमित पाठक बनें

जीवनीय, ई-III/250, सेक्टर एच
अलीगंज, लखनऊ - 226020

Jeevaniya, E III/250, Sector H
Aliganj, Lucknow - 226020